श्रीः ।

श्रीशिवस्वरोदय ।

महामहोपाध्यायधर्मशास्त्राग्रगण्य श्रीयुत पण्डित मिहिरचन्द्रकृतभाषानुवादसमेत.



श्रीशिवजी और पार्वतीजीका संवाद.

जिसमें

राजयोग, हठयोग, प्राणायामादि तत्त्वदर्शियोंकी परमोपयोगी क्रिया वर्णित हैं ।



जिस्को

खेमराज श्रीकृष्णदासने

बंबई

निज "श्रीवेङ्कटेश्वर" छापाखानामें

मुद्रितकर प्रसिद्ध किया ।

शके १८२०, संवत १९५५.

भूमिका।



दोहा।

अष्टसिद्धिनवनिधिमिलत, मिलतमोक्षसुखखानि।
आत्माहनगतिहूमिलत, शिवस्वरोदयजानि ॥

यद्यपि यश, कीर्त्ति, धन धाम मोक्ष मिलनेके अनेक साधन हैं और साधक लोग निज बल, बुद्धि, ज्ञान, ध्यान, धर्म्म, कर्म्मद्वारा भवसागर पार होते हैं नर किस गतिको प्राप्त होते हैं यह अदेख भविष्यत् वाणी सदा संदेह मेहसी वर्षाती रहती है जिससे प्रायः समयान्तरमें अनेकन धर्म्म कर्म्म पंथ चले हैं और नित्य नवीन चले जाते हैं वास्तवमें सत्य और मान के योग्य वही वस्तु है जिसमें प्रत्यक्ष गुण प्रगट हो; अतः यह जो पुस्तक "शिवस्वरोदय" उमामहेश्वर संवाद तत्त्व ज्ञानकी हैं अलबत्तः इसके द्वारा बहुतोंने जीवन सफल किया. तत्त्व, श्वास, नाडी प्राणायामकर सिद्ध बन मानो साक्षात् परमेश्वरका उदाहरण कर दिखाया, संस्कृतमें भी इस अलभ्य पदार्थका मिलना बहुत दुर्लभ था परन्तु हमने बडी परिश्रमतासे संस्कृत की अत्यंत शुद्ध पुस्तकसे सर्वके सुगमार्थ भाषान्तर कराया यद्यपि कायिक, मानसिक, वाचिक तो प्रत्येक

के पीछे लगे हैं और लगना सम्भवभी है परंतु तदपि यह केवल कायिकही क्रियासें नरराज किन्तु देवराज तक बनादेता है जिनको इस असार संसार में बेशुमार सुख उठाना हो वह अवश्य इसकी उक्ति गुरुकी भक्ति निज-शक्तिसे शारीरिक सुरदुर्लभ सुख भोगकर अन्तमें निजेच्छासे आनन्दपूर्वक सुरपुरमें विचरैंगे.

आपका कृपाभिलाषी-

खेमराज श्रीकृष्णदास,

"श्रीवेङ्कटेश्वर" छापाखाना-(मुंबई.)



श्रीगणेशाय नमः ।

अथ शिवस्वरोदयकी-

अनुक्रमणिका ।



विषयानुक्रमणिका

श्रीः ।

शिवस्वरोदयः ।

भाषाटीकासमेतः ।



महेश्वरंनमस्कृत्यशैलजांगणनायकम् ॥
गुरुं च परमात्मानंभजेसंसारतारणम् ॥ १ ॥

अर्थ—महादेव, पार्वती, गणेश, गुरु और संसार पार करनेवाले परमात्माको भजताहूं अर्थात् प्रणाम आदिसे उनका सेवन करताहूं ॥ १ ॥

देव्युवाच ॥ देवदेवमहादेवकृपांकृत्वाममोपरि ॥
सर्वसिद्धिकरंज्ञानंकथयस्वममप्रभो ॥ २ ॥

अर्थ—पार्वती कहतीहै कि हेदेवताओंके देव हेप्रभो मेरे ऊपर कृपा करिके संपूर्ण सिद्धियोंके करनेवाले ज्ञानको मेरेलिये कहो ॥ २ ॥

कथंब्रह्मांडमुत्पन्नंकथंवापरिवर्तते ॥
कथंविलीयतेदेववदब्रह्मांडनिर्णयम् ॥ ३ ॥

अर्थ—हेदेव यह ब्रह्माण्ड कैसे उत्पन्न होताहै और किसप्रकार इसकी पालना होतीहै और कैसे इसकी प्रलय होतीहै इस ब्रह्माण्डके निर्णयको मुझे कहो ॥ ३ ॥

ईश्वरउवाच ॥ तत्त्वाद्ब्रह्मांडमुत्पन्नंतत्त्वेनपरिवर्तते ॥ तत्त्वेविलीयतेदेवितत्त्वाद्ब्रह्मांडनिर्णयः॥४॥

अर्थ—महादेव बोले यह ब्रह्माण्ड तत्वोंसे उत्पन्न होताहै और तत्वोंसेही इसकी पालना होतीहै और तत्वोंमेंही लीन होजाताहै—इससे तत्वोंसेही इसका निर्णय समझो ॥ ४ ॥

देव्युवाच ॥ तत्त्वमेव परं मूलं निश्चितं तत्त्व-
वादिभिः॥तत्त्वस्वरूपंकिंदेवतत्त्वमेवप्रकाशय ५

अर्थ—पार्वती बोली कि तत्ववादियोंने ब्रह्माण्डका मूल तत्वकोही निश्चित कियाहै इससे हेदेव तत्वका स्वरूप क्याहै सो मेरेप्रति आपही प्रगट करैं ॥ ५ ॥

ईश्वरउवाच ॥ निरंजनोनिराकारएकोदेवोमहे
श्वरः॥तस्मादाकाशमुत्पन्नमाकाशाद्वायुसंभवः६

अर्थ—महादेव बोले कि मायारहित निराकार एक देव परमेश्वरहै उससे आकाशपैदाहुआ और आकाशसे वायु उत्पन्नहुई ॥ ६ ॥

वायोस्तेजस्ततश्चापस्ततःपृथ्वीसमुद्भवः ॥
एतानिपंचतत्त्वानिविस्तीर्णानिचपंचधा ॥ ७ ॥

अर्थ—वायुसे तेज और तेजसे जल और जलसे पृथ्वी उत्पन्न हुई ये पांच तत्व एक २ के प्रति पांच प्रकारसे विस्तारको प्राप्त होते हैं अर्थात् पंचीकरण करनेसे पचीसतत्व होते हैं ॥ ७ ॥

तेभ्योब्रह्मांडमुत्पन्नंतैरेवपरिवर्त्तते ॥
विलीयतेचतत्रैवतत्रैवरमतेपुनः ॥ ८ ॥

अर्थ—इनसे ब्रह्माण्ड उत्पन्न होताहै और इन्हीसे ब्रह्माण्डकी पालना होतीहै और इन्हीमें लीन होकर फिर सूक्ष्म रूपसे बना रहताहै ॥ ८ ॥

पंचतत्त्वमयेदेहेपंचतत्त्वानिसुंदरी ॥
सूक्ष्मरूपेणवर्त्ततेज्ञायंतेतत्त्वयोगिभिः ॥ ९ ॥

अर्थ—हे सुंदरि पांच तत्वोंसे पैदा हुये देहमें ये पांचोंतत्व सूक्ष्म रूपसे वर्तते हैं उनको तत्वोंके ज्ञाता योगीजन जानतेहैं ॥ ९ ॥

अथस्वरंप्रवक्ष्यामिशरीरस्थस्वरोदयम् ॥
हंसचारस्वरूपेणभवेज्ज्ञानंत्रिकालजम् ॥ १० ॥

अर्थ—अब शरीरके विषे स्थित स्वरोंकी उत्पत्तिहै जिससे ऐसे जो अकार आदिस्वर उनको कहताहूं जिनके ज्ञानसे हंस चार रूपसे भूत भविष्यत् वर्तमान तीनोंकालोंका ज्ञान होताहैं ॥ १० ॥

गुह्याद्गुह्यतरंसारमुपकारप्रकाशनम् ॥
इदंस्वरोदयंज्ञानंज्ञानानांमस्तकेमणिः ॥ ११ ॥

अर्थ—यह स्वरोदयज्ञान जितनी गोप्य व, छिपी वस्तुहैं उनमें गुप्त—सार—उपकारोंका प्रकाशक है और सब ज्ञानोंका शिरोमणी है ॥ ११ ॥

सूक्ष्मात्सूक्ष्मतरंज्ञानंसुबोधंसत्यप्रत्ययम् ॥
आश्चर्यंनास्तिकेलोकेआधारंत्वास्तिकेजने १२॥

अर्थ—और यह स्वरोदये ज्ञान और भली प्रकार जानने योग्य और प्रतीतिका करताहै जो जन नास्तिक हैं उनको आश्चर्य्य दीखताहै और जो आस्तिकहैं उनका आधारहैं ॥ १२ ॥

अथ शिष्यलक्षणम् ।

शांतेशुद्धेसदाचारेगुरुभक्त्यैकमानसे ॥
दृढचित्तेकृतज्ञेचदेयंचैवस्वरोदयम् ॥ १३ ॥

अर्थ—शांतस्वभाव—शुद्ध—उत्तम आचरणशील—गुरुकी भक्तिमें जिसका मन और दृढ चित्त किये उपकारोंका ज्ञाता—ऐसे शिष्यकोही स्वरोदय देना॥ १३॥

दुष्टेचदुर्जनेक्रुद्धेनास्तिकेगुरुतल्पगे ॥
हीनसत्वेदुराचारेस्वरज्ञानंनदीयते ॥ १४ ॥

अर्थ—जो दुष्ट—दुर्जन—क्रोधी—नास्तिक—गुरुस्त्रीगामी—अधीर—और दुराचारीहो उसको स्वरकाज्ञान न दे.

शृणुत्वंकथितंदेविदेहस्थंज्ञानमुत्तमम् ॥
येनविज्ञातमात्रेणसर्वज्ञत्वंप्रणीयते ॥ १५ ॥

अर्थ—हे देवी तू मेरे कहे हुये देहमें स्थित उत्तम ज्ञान को सुन जिसके ज्ञान मात्रसेही सर्वज्ञ हो जाताहै॥ १५॥

स्वरेवेदाश्चशास्त्राणिस्वरेगांधर्वमुत्तमम् ॥
स्वरेचसर्वत्रैलोक्यंस्वरमात्मस्वरूपकम् ॥१६॥

अर्थ—संपूर्ण वेद—शास्त्र और उत्तम गांधर्व (गान-

विद्या) और संपूर्ण त्रिलोकी ये सब स्वरमेंहीहैं-और स्वरही आत्मा स्वरूप है ॥ १६ ॥

स्वरहीनश्चदैवज्ञोनाथहीनंयथागृहम् ॥
शास्त्रहीनंयथावक्त्रंशिरोहीनंचयद्वपुः ॥ १७ ॥

अर्थ—स्वरके ज्ञानसे हीन ज्योतिषी—और स्वामीसे हीन घर—शास्त्रसेहीन मुख—और शिरसेहीन देह—शोभित नहीं होते ॥ १७ ॥

नाडीभेदंतथाप्राणतत्त्वभेदंतथैवच ॥
सुषुम्नामिश्रभेदंचयोजानातिसमुक्तिगः ॥ १८ ॥

अर्थ—जो मनुष्य नाडी—प्राण—तत्व और सुषुम्ना आदि मिश्रित तीन नाडियोंके भेदको जानता है वह मुक्तिको प्राप्त होताहै ॥ १८ ॥

साकारेवानिराकारेशुभंवायुबलात्कृते ॥
कथयंतिशुभंकेचित्स्वरज्ञानं वरानने ॥ १९ ॥

अर्थ—साकार [व्यावहारिक] वा निराकार [पारमार्थिक] में वायु [स्वर] केवल श्रम होताहै और हे पार्वति कोई यह कहते हैं कि स्वरके ही ज्ञानसे शुभ होताहै ॥ १९ ॥

ब्रह्मांडखंडपिंडाद्याःस्वरेणैवहिनिर्मिताः ॥
सृष्टिसंहारकर्त्ताचस्वरः साक्षान्महेश्वरः ॥ २० ॥

अर्थ—ब्रह्मांडके खंड और पिंड आदि स्वरकेही

रचेहैं और सृष्टि और संहारका कर्त्ता साक्षात् महेश्वर [शिव] रूप स्वरहीहै ॥ २० ॥

स्वरज्ञानात्परंगुह्यंस्वरज्ञानात्परंधनम् ॥
स्वरज्ञानात्परंज्ञानंनवादृष्टंनवाश्रुतम् ॥ २१ ॥

अर्थ–स्वरके ज्ञानसे परे गुह्य–स्वरके ज्ञानसे परे धन-स्वरके-ज्ञानसे परे ज्ञान न देखाहै और न सुनाहै २१

शत्रुंहन्यात्स्वरबलेतथामित्रसमागमः ॥
लक्ष्मीप्राप्तिःस्वरबलेकीर्तिःस्वरबलेसुखम्॥२२॥

अर्थ–स्वरका बल होय तौ शत्रुको हनै और मित्रका समागम–और लक्ष्मी की प्राप्ति और कीर्ति और सुख स्वरके ही बलसे होतीहैं ॥ २२ ॥

कन्याप्राप्तिः स्वरबलेस्वरतोराजदर्शनम् ॥
स्वरेणदेवतासिद्धिःस्वरेणक्षितिपोवशः ॥ २३ ॥

अर्थ–और कन्याकी प्राप्ति [विवाह] और राजा का दर्शन–देवता की सिद्धि और राजा का वशमें होना स्वरसे ही होतेहैं ॥ २३ ॥

स्वरेणगम्यतेदेशोभोज्यंस्वरबलेतथा ॥
लघुदीर्घस्वरबलेमलंचैवनिवारयेत् ॥ २४ ॥

अर्थ–स्वरके ही बलसे देशाटन होताहै और स्वरके ही बलसे भोजन–और स्वरके ही बलसे लघुशंका और मलका त्याग होताहै ॥ २४ ॥

सर्वशास्त्रपुराणादिस्मृतिवेदांगपूर्वकम् ॥

स्वरज्ञानात्परंतत्त्वंनास्तिकिंचिद्वरानने ॥ २५ ॥

अर्थ—संपूर्ण शास्त्र और पुराणादि स्मृति और वेदांग आदि ये सब स्वरज्ञानसे परे तत्व नहीं हैं ॥ २५ ॥

नामरूपादिकःसर्वोमिथ्यासर्वेषुविभ्रमः ॥
अज्ञानमोहितामूढायावत्तत्त्वंनविद्यते ॥ २६ ॥

अर्थ—इतने तत्वका ज्ञान नहीं होता तबतक नाम-रूप आदि भ्रम मिथ्या हैं और मूढ जनोंको मोहभी तबतकही है ॥ २६ ॥

इदंस्वरोदयंशास्त्रंसर्वशास्त्रोत्तमोत्तमम् ॥
आत्मघटप्रकाशार्थंप्रदीपकलिकोपमम् ॥ २७ ॥

अर्थ—यह स्वरोदय शास्त्र संपूर्ण उत्तम २ शास्त्रोंमें उत्तमहै और आत्मारूपी घटके प्रकाशार्थ दीपककी कलिका [कली] के समानहै ॥ २७ ॥

यस्मैकस्मैपरस्मैवानप्रोक्तंप्रश्नहेतवे ॥ तस्मा
देतत्स्वयंज्ञेयमात्मानोवाऽऽत्मनाऽऽत्मनि ॥ २८ ॥

अर्थ—यह स्वरोदय प्रश्न करनेसे जिस किसको नहीं कहना किंतु अपने लिये अपनेही देहमें अपनी बुद्धिसे स्वयं जानना ॥ २८ ॥

नतिथिर्नचनक्षत्रंनवारोग्रहदेवता ॥
नचविष्टिर्व्यतीपातोवैधृत्याद्यास्तथैवच ॥ २९ ॥

अर्थ—इस स्वरोदयमें तिथी—नक्षत्र—वार—ग्रह-देवता—भद्रा—व्यतीपात वैधृति आदिका दोष नहींहै २९

कुयोगोनास्तिकोदेविभवितावाकदाचन ॥
प्राप्तेस्वरबलेशुद्धेसर्वमेवशुभंफलम् ॥ ३० ॥

अर्थ—हे देवि इसमें कोई कुयोग नहीं है और न कभी होगा जब स्वरका शुद्ध बल प्राप्तहो तब संपूर्ण फल शुभही होताहै ॥ ३० ॥

देहमध्येस्थितानाड्योबहुरूपाःसुविस्तरात् ॥
ज्ञातव्याश्चबुधैर्नित्यंस्वदेहज्ञानहेतवः ॥ ३१ ॥

अर्थ—देहके मध्यमें अनेक रूप और विस्तारवाली बहुतसी नाडी स्थितहैं वे सब अपने देहके ज्ञानार्थ विद्वानोंको जाननी ॥ ३१ ॥

नाभिस्थानगकंदोर्ध्वमंकुरादेवनिर्गताः ॥
द्विसप्ततिसहस्राणिदेहमध्येव्ययस्थिताः ॥ ३२ ॥

अर्थ—नाभि स्थानके कंदसे ऊपर अंकुरके समान निकसीहैं और देहके मध्यमें ७२००० बहत्तर सहस्र नाडी स्थितहैं ॥ ३२ ॥

नाडीस्थाकुंडलीशक्तिर्भुजंगाकारशायिनी ॥
ततोदशोर्ध्वगानाड्योदशैवाधःप्रतिष्ठिताः ॥३३॥

अर्थ—नाडीमें स्थित और सर्पके समान सोतीहुयी कुंडली शक्तिहै उससे ऊपरको गई हुयी दश नाडी हैं और दशही नीचेको गयीहैं ॥ ३३ ॥

द्वेद्वेतिर्यग्गतेनाड्यौचतुर्विंशतिसंख्यया ॥
प्रधानादशनाड्यस्तुदशवायुप्रवाहकाः ॥ ३४ ॥

अर्थ—दो २ नाडी तिरछी गयीहैं ये चोवीस नाडी हैं तिनमें दश नाडी प्रधानहैं और दश वायुके प्रवाहको करतीहैं ॥ ३४ ॥

तिर्यगूर्ध्वास्तथानाड्योवायुदेहसमन्विताः ॥
चक्रवत्संस्थितादेहेसर्वाः प्राणसमाश्रिताः ३५॥

अर्थ—तिरछी—ऊपर और नीचे स्थित और वायु और देहके आश्रित सब नाडी देहमें चक्रके समान स्थितहैं और सब प्राणके आधीनहैं ॥ ३५ ॥

तासांमध्येदशश्रेष्ठादशानांतिस्रउत्तमाः ॥
इडाचपिंगलाचैवसुषुम्नाचतृतीयका ॥ ३६॥

अर्थ—उन सब नाडीमें दश नाडी श्रेष्ठहैं और उन दशोंमें ये तीन उत्तमहैं कि इडा, पिंगला और तीसरी सुषुम्ना ३६

गांधारीहस्तिजिह्वाचपूषाचैवयशस्विनी ॥
अलंबुषाकुहूश्चैवशंखिनीदशमीतथा ॥ ३७ ॥

अर्थ—गांधारी—हस्ति जिह्वा—पूषा—यशस्विनी—अलंबुषा—कुहू—और दशवीं शंखिनी—जाननी ॥ ३७॥

इडावामेस्थिताभागेपिंगलादक्षिणेस्मृता ॥
सुषुम्नामध्यदेशेतुगांधारीवामचक्षुषि ॥३८ ॥

अर्थ—इडा नाडी वामभागमें—पिंगला दक्षिण भागमें और सुषुम्ना मध्य देशमें और गांधारी वामनेत्रमें जाननी ॥ ३८ ॥

दक्षिणेहस्तिजिह्वाचपूर्षाकेर्णेचदक्षिणे ॥
यशस्विनीवामकर्णेआननेचाप्यलंबुषा ॥ ३९ ॥

अर्थ—दक्षिण नेत्रमें हस्तिजिव्हा और दक्षिण कर्णमें पूषा और वामकर्णमें यशस्विनी और मुखमें अलंबुषा जाननी ॥ ३९ ॥

कुहूश्चलिंगदेशेतुमूलस्थानेतुशंखिनी ॥
एवंद्वारंसमाश्रित्यातिष्ठंतिदशनाडिकाः ॥ ४० ॥

अर्थ—लिंग देशमें कुहू और गुदास्थानमें शंखिनी जाननीइस प्रकार शरीरके द्वारोंमें दश नाडी टिकतीहैं ४०

इडापिंगलासुषुम्नाचप्राणमार्गेसमाश्रिताः ॥
एताहिदशनाड्यस्तुदेहमध्येऽव्यवस्थिताः ॥ ४१॥

अर्थ—इडा पिंगला सुषुम्ना ये तीनों प्राण मार्गमें आश्रितहैं ये दश नाडी देहके मध्यमें स्थितहैं ॥ ४१ ॥

नामानिनाडिकानांतुवातानांतुवदाम्यहम् ॥
प्राणोऽपानःसमानश्चउदानोव्यानएवच ॥ ४२ ॥

अर्थ—नाडियोंके आश्रय जो वायुहैं उनके नाम मैं कहताहूं कि प्राण अपान समान उदान और व्यान ४२

नागःकूर्मोथकृकलोदेवदत्तोधनंजयः ॥
हृदिप्राणोवसेन्नित्यमपानोगुदमंडले ॥ ४३ ॥

अर्थ—नाग कूर्म कृकल देवदत्त और धनंजय और प्राणवायु हृदयमें और अपान गुदामंडलमें सदैव वसताहै.

समानोनाभिदेशेतुउदानःकंठमध्यगः ॥

व्यानोव्यापीशरीरेषुप्रधानादशवायवः ॥ ४४ ॥

अर्थ—समान नाभिदेशमें कंठके मध्यमें उदान और सब शरीरमें व्यापी व्यान वायु होताहै ये दशवायु प्रधानहैं.

प्राणाद्याःपंचविख्यातानागाद्याःपंचवायवः ॥
तेषामपिचपंचानांस्थानानिचवदाम्यहम् ॥ ४५॥

अर्थ—पांच प्राण आदि और पांच नाग आदिहैं उन नाग आदि पांचोंकेभी मैं स्थान कहताहूं॥ ४५ ॥

उद्गारेनागआख्यातःकूर्मउन्मीलनेस्मृतः ॥
कृकलःक्षुतकृज्ज्ञेयोदेवदत्तोविजृंभणे ॥ ४६ ॥

अर्थ—उद्गार (उगलना) में नाग वायु और नेत्रोंके उन्मीलनमें कूर्म और छींकनेमें कृकल और विजृंभण (जंभाई) में देवदत्त वायु जानना ॥ ४६ ॥

नजहातिमृतंवापिसर्वव्यापीधनंजयः ॥
एतेनाडीषुसर्वासुभ्रमंतेजीवरूपिणः ॥ ४७ ॥

अर्थ—और सर्व शरीरमें व्यापी धनंजय वायु मृत शरीरकोभी नहीं त्यागता जीवरूपी ये दश वायु सर्व नाडियों में भ्रमतेहैं ॥ ४७ ॥

प्रकटंप्राणसंचारंलक्षयेद्देहमध्यतः ॥
इडापिंगलासुषुम्नाभिर्नाडीभिस्तिसृभिर्बुधः ४८॥

अर्थ—देहके मध्यमें जो प्रकट प्राणका संचारहै उसको इडा पिंगला सुषुम्ना इन तीन नाडियोंसे ही बुद्धिमान् मनुष्य जाने ॥ ४८ ॥

इडावामेचविज्ञेयापिंगलादक्षिणेस्मृता ॥
इडानाडीस्थितावामाततोव्यस्ताचपिंगला॥४९॥

अर्थ—वाम भागमें इडा पिंगला कहीहै इडा नाडी वामरूपसे स्थितहै और व्यस्त उलटी पिंगला स्थितहै ४९

इडायांतुस्थितश्चंद्रःपिंगलायांचभास्करः ॥
सुषुम्नाशंभुरूपेणशंभुर्हंसस्वरूपतः ॥ ५० ॥

अर्थ—इडामें चन्द्रमा स्थितहै और पिंगलामें सूर्य और सुषुम्ना हंसरूपसे स्थितहै और हंस शंभुरूपसे स्थितहै ॥ ५० ॥

हकारोनिर्गमेप्रोक्तःसकारेणप्रवेशनम् ॥
हकारःशिवरूपेणसकारःशक्तिरुच्यते ॥ ५१ ॥

अर्थ—स्वरके निकसनेमें हकार कहाहै और प्रवेशमें सकार. हकार शिवरूप कहाहै और सकार शक्तिरूप कहाहै ॥ ५१ ॥

शक्तिरूपः स्थितश्चंद्रोवामनाडीप्रवाहकः ॥
दक्षनाडीप्रवाहश्चशंभुरूपोदिवाकरः ॥ ५२ ॥

अर्थ—और वाम नाडीका प्रवाहक चन्द्रमा शक्तिरूपसे स्थितहै और दक्षिण नाडीका प्रवाहक (जलनेवाला) शंभु रूप सूर्य स्थितहै ॥ ५२ ॥

श्वासेसकारसंस्थेतु यद्दानंदीयतेबुधैः ॥
तद्दानंजीवलोकेस्मिन् कोटिकोटिगुणंभवेत् ५३

अर्थ—जब श्वास संक्रांतिमें स्थितहो उस समय जो दान बुद्धिमान् मनुष्य दें वह दान इस जीवलोकमें कोटि-गुना फल देताहै ॥ ५३ ॥

अनेनलक्षयेद्योगीचैकचित्तःसमाहितः ॥
सर्वमेषविजानीयान्मार्गेवैचंद्रसूर्ययोः ॥ ५४ ॥

अर्थ—एकाग्र चित्त और समाहित (सावधान) योगी इसी मार्गसे देखे और चंद्रमा और सूर्यके मार्गमें ही सबको जानलें ॥ ५४ ॥

ध्यायेत्तत्त्वंस्थिरेजीवेअस्थिरेनकदाचन ॥
इष्टसिद्धिर्भवेत्तस्यमहालाभोजयस्तथा ॥ ५५ ॥

अर्थ—जो मनुष्य जिस समय जीव स्थिरहो उसी समय तत्त्वका ध्यान करै अस्थिर (चंचल) में कदाचित् न करै उसके इष्टकी सिद्धि होतीहै और महान् लाभ और जय होताहै ॥ ५५ ॥

चंद्रसूर्यसमभ्यासंयेकुर्वंतिसदानराः ॥
अतीतानागतज्ञानंतेषांहस्तगतंभवेत् ॥ ५६ ॥

अर्थ—जो मनुष्य सदैव चंद्र सूर्य स्वरोंका भली प्रकार अभ्यास करतेहैं उनको भूत और भविष्यत्का ज्ञान हस्तगत (प्रत्यक्ष) होताहै ॥ ५६ ॥

वामेचामृतरूपास्याज्जगदाप्यायनंपरम् ॥
दक्षिणेचरभागेनजगदुत्पादयेत्सदा ॥ ५७ ॥

अर्थ—वाम भागकी नाडी (इडा) अमृतरूप और

सब जगतकी पोषक होती है और दक्षिणके चर भागकी पिंगला नाडी सदैव जगत्को पैदा करतीहै ॥ ५७ ॥

मध्यमाभवतिक्रूरादुष्टासर्वत्रकर्मसु ॥
सर्वत्रशुभकार्येषुवामाभवतिसिद्धिदा ॥ ५८ ॥

अर्थ—और मध्यमा (सुषुम्ना) नाडी क्रूरा और संपूर्ण कर्मोंमें दुष्ट होतीहै और वामा नाडी संपूर्ण शुभ कार्योंमें सिद्धिकी दाता होतीहै ॥ ५८ ॥

निर्गमेतुशुभावामाप्रवेशेदक्षिणाशुभा ॥
चंद्रःसमस्सुविज्ञेयोरविस्तुविषमःसदा ॥ ५९ ॥

अर्थ—और गमनके समयमें वामा नाडी और प्रवेशके समयमें दक्षिण शुभ होतीहै और चंद्रमाको सम और सूर्यको विषम सदैव जानना ॥ ५९ ॥

चंद्रःस्त्रीपुरुषःसूर्यश्चंद्रोगौरोसितोरविः ॥
चंद्रनाडीप्रवाहेणसौम्यकार्याणिकारयेत् ॥ ६० ॥

अर्थ—चन्द्रमा स्त्री और सूर्य पुरुष और चंद्रमा गौरवर्ण और सूर्य कृष्ण वर्ण जानना और जब चंद्रमाकी नाडीका प्रवाह हो उससमय सौम्य कार्योंको करै ६०

सूर्यनाडीप्रवाहेणरौद्रकर्माणिकारयेत् ॥
सुषुम्नायाःप्रवाहेणभुक्तिमुक्तिफलानिच ॥ ६१ ॥

अर्थ—और सूर्य नाडीके प्रवाहमें रौद्र (क्रूर) कर्मों करावें और सुषुम्नाके प्रवाहमें भोग और मुक्ती फलके देनेवाले कार्योंको करै ॥ ६१ ॥

आदौचंद्रःसितेपक्षेभास्करोहिसितेतरे ॥
प्रतिपत्तोदिनान्याहुस्त्रीणित्रीणिकृतोदयौ ॥६२॥

अर्थ-शुक्ल पक्षमें प्रथम चन्द्रमाका स्वर और कृष्ण पक्षमें प्रथम सूर्यका चलताहै और प्रतिपदासे लेकर तीन २ दिन चन्द्रमा और सूर्यका स्वर बलवान् होताहै ॥ ६२ ॥

सार्धद्विघटिकेज्ञेयःशुक्लेकृष्णेशशीरविः ॥
वहत्येकदिनेनैवयथाषष्टिघटीःक्रमात् ॥ ६३ ॥

अर्थ-और ढाई ढाई २॥ घटी शुक्ल पक्षमें चन्द्रमा ढाई ढाई २॥ घटी कृष्ण पक्षमें सूर्य एक दिनमें साठ घटी पर्यंत वहतेहैं अर्थात् दोनों स्वरोंकी क्रमसे २४ चौवीस २ आवृत्ति होतीहैं ॥ ६३ ॥

वहेयुस्तद्घटीमध्येपंचतत्त्वानिनिर्दिशेत् ॥
प्रतिपत्तोदिनान्याहुर्विपरीतेविवर्जयेत् ॥ ६४ ॥

अर्थ-और उन प्रत्येक ढाई २॥ घटियोंमें पांचों तत्व वहतेहैं और प्रतिपदासे लेकर जो चन्द्रमा और सूर्यके दिन कहेहैं उनसे विपरीत होय अर्थात् चन्द्रमाके स्वरमें सूर्यका और सूर्यके समयमें चन्द्रमाका स्वर चले तो उसको वर्ज दे क्योंकि वह अशुभहै॥ ६४ ॥

शुक्लपक्षेभवेद्वामाकृष्णपक्षेचदक्षिणा ॥
जानीयात्प्रतिपत्पूर्वंयोगितद्यतमानसः ॥ ६५ ॥

अर्थ-शुक्ल पक्षमें प्रतिपदासे लेकर प्रथम वामा और

कृष्ण पक्षमें प्रथम दक्षिणा नाडीको योगी एकाग्र अन्तः-करणसे जाने ॥ ६५ ॥

शशांकंवारयेद्रात्रौदिवावारयभास्करम् ॥
इत्यभ्यासरतोनित्यंसयोगीनात्रसंशयः ॥ ६६ ॥

अर्थ—रात्रीके समय चंद्र स्वरको और दिनके समय सूर्य स्वरको निवारण करै इस प्रकार अभ्यासमें जो तत्परहै वही योगीहै इसमें संशय नहीं ॥ ६६ ॥

सूर्येणबध्यतेसूर्यश्चंद्रश्चंद्रेणबध्यते ॥
योजानातिक्रियामेतांत्रैलोक्यंवशगंक्षणात्॥६७॥

अर्थ—सूर्यके स्वरसे सूर्य और चंद्रमाके स्वरसे चंद्रमा बंद होताहै और जो मनुष्य इस क्रियाको जानताहै उसके वशमें त्रिलोक क्षण मात्रमें होतेहैं ॥ ६७ ॥

उदयंचंद्रमार्गेणसूर्येणास्तमनंयदि ॥
तदातेगुणसंघाताविपरीतंविवर्जतेत् ॥ ६८ ॥

अर्थ—यदि चंद्रमाके स्वरमें सूर्यका उदय हो और सूर्यके स्वरमें अस्त होय तो उस समय अनेक गुणोंके समूह पैदा होतेहैं और इससे विपरीत (उलटा) होय तो उसको वर्जदे ॥ ६८ ॥

गुरुशुक्रबुधेंदूनांवासरेवामनाडिका ॥
सिद्धिदासर्वकार्येषुशुक्लपक्षेविशेषतः ॥ ६९ ॥

अर्थ—बृहस्पति शुक्र बुध और सोम इन चारोंमें वाम नाडी सब कार्योंमें सिद्धि की दाता होती है और शुक्ल

पक्षमें यह होय तो औरभी विशेष फल होताहै ॥ ६९ ॥

अर्कांगारकसौरीणांवासरेदक्षनाडिका ॥
स्मर्त्तव्याचरकार्येषुकृष्णपक्षेविशेषतः ॥ ७० ॥

अर्थ—आदित्य मंगल शनैश्चर इन वारोंमें दक्षिण नाडीका स्मरण चर कार्योंमें करना और इसका फल कृष्ण पक्षमें विशेष कर होताहै ॥ ७० ॥

प्रथमंवहतेवायुर्द्वितीयंचतथानलः ॥
तृतीयंवहतेभूमिश्चतुर्थंवारुणीवहेत् ॥ ७१ ॥

अर्थ—प्रथम वायु तत्व वहताहै द्वितीयबार अग्नितत्त्व, तृतीय बार भूमि तत्व और चतुर्थ वार वरुण तत्त्व वहताहै और पांचवी आकाशतत्व ॥ ७१ ॥

सार्द्धद्विघटिकेपंचक्रमेणैवोदयंतिच ॥
क्रमादेकैकनाड्यांचतत्त्वानांपृथगुद्भवः ॥७२ ॥

अर्थ—ढाई घटीके मध्ये ये पूर्वोक्त पांचों तत्व क्रमसे उदय होतेहैं और एक २ नाडीमें भी क्रमसे पृथक् पांचों तत्व उदय होतेहैं ॥ ७२ ॥

अहोरात्रस्यमध्येतुज्ञेयाद्वादशसंक्रमाः ॥
वृषकर्कटकन्यालिमृगमीनानिशाकरे ॥ ७३ ॥

अर्थ—और रात्रि और दिनके मध्यमें चंद्र और सूर्यकी बारह संक्राति ज्ञाननी तिनमें वृष कर्क कन्या वृश्चिक मकर मीन संक्राति चंद्रमाकी होतीहैं ॥ ७३ ॥

मेषसिंहौचकुंभश्चतुलाश्चमिथुनंधनम् ॥
उदंयेदक्षिणज्ञेयःशुभाशुभविनिर्णयः ॥ ७४ ॥

अर्थ—मेष सिंह कुंभ तुला मिथुन धन ये संक्रांति सूर्यकी जाननी इस प्रकार उदय और दक्षिणके शुभ अशुभका निर्णय जाननना ॥ ७४ ॥

तिष्ठेत्पूर्वोत्तरेचन्द्रोभानुःपश्चिमदक्षिणे ॥
दक्षनाड्याःप्रसारेतुनगच्छेद्याम्यपश्चिमे ॥ ७५ ॥

अर्थ—पूर्व और उत्तरमें चंद्रमा टिकताहै और पश्चिम और दक्षिणमें सूर्य, दक्षिण नाडीके प्रवाह(स्वर) में दक्षिण और पश्चिममें नजाय ॥ ७५ ॥

वामाचारप्रवाहेतुनगच्छेत्पूर्वउत्तरे ॥
परिपंथिभयंतस्यगतोऽसौनानिवर्त्तते ॥ ७६ ॥

अर्थ—और वाम नाडीके प्रचारमें पूर्व और उत्तरमें न जाय जायतौ उसको शत्रुका भय होताहै और गया वह फिर नहीं लौटता ॥ ७६ ॥

तत्रतस्मान्नगंतव्यंबुधैःसर्वहितैषिभिः ॥
तदातत्रतुसंयातेमृत्युरेवनसंशयः ॥ ७७ ॥

अर्थ—तिससे सबके हितैषी उस समय नजाय यदि उससमयमें जायतौ मृत्यु होनेमें संदेह नहीं होता ७७॥

शुक्लपक्षेद्वितीयायामर्केवहतिचंद्रमाः ॥
दृश्यतेलाभदःपुंसांसौम्येसौख्यंप्रजायते ॥ ७८ ॥

अर्थ—यदि शुक्ल पक्षकी द्वितीयाके दिन सूर्यके प्रवा-

हमें चंद्रमा वहे तो पुरुषोंको लाभदायक होताहै और उस समय सौम्य कार्य किया जाय तो सुख होताहै ७८॥

सूर्योदयेयदासूर्यश्चंद्रश्चंद्रोदयेभवेत् ॥
सिध्यंतिसर्वकार्याणिदिवारात्रिगतान्यपि ॥ ७९ ॥

अर्थ—जिस समय सूर्यके उदयमें सूर्य और चंद्रमाके उदयमें चंद्रमाकाही स्वरहो उस समय दिन वा रात्रिमें किये हुये सब काम सिद्ध होतेहैं ॥ ७९ ॥

चंद्रकालेयदासूर्यः सूर्यश्चंद्रोदयेभवेत् ॥
उद्वेगःकलहोहानिःशुभंसर्वंनिवारयेत् ॥ ८० ॥

अर्थ—जिस समय चंद्रमाके समयमें सूर्य और सूर्यके समयमें चंद्रमा होय तब उद्वेग कलह हानि होतेहैं और संपूर्ण शुभकी निवृत्ति होतीहै ॥ ८० ॥

सूर्यस्यवाहेप्रवदंतिविज्ञाज्ञानंह्यगम्यस्यतुनिश्चयेन ॥ श्वासेनयुक्तस्यतुशीतरश्मेःप्रवाहकाले फलमन्यथास्यात् ॥ ८१ ॥

अर्थ—बुद्धिमान् मनुष्य सूर्यके प्रवाहमें अगम्य (जो न देखी न सुनी) वस्तुको ज्ञान निश्चयसे कहतेहैं और चंद्रमाके श्वासका प्रवाह होय तो अन्यथा फल होताहै अर्थात् अगम्य वस्तुका ज्ञान नहीं होता ॥ ८१ ॥

अथ विपरीतलक्षणम् ।

यदाप्रत्यूषकालेनविपरीतोदयोभवेत् ॥
चंद्रस्थानेवहत्यर्कोरविस्थानेचचंद्रमाः ॥ ८२ ॥

अर्थ—जिस दिन प्रातःकालसे लेकर विपरीत स्वरोंका उदयहो अर्थात् चंद्रमाके स्थानमें सूर्य और सूर्यके स्थानमें चंद्रमा वहै उस समय यह फल जानना कि८२

प्रथमेमनउद्वेगंधनहानिर्द्वितीयके ॥
तृतीयेगमनंप्रोक्तमिष्टनाशंचतुर्थके ॥ ८३ ॥

अर्थ—प्रथममें मनका उद्वेग दूसरेमें धनकी हानि और तीसरेमें गमन और चौथेमें इष्टका नाश होताहै ॥८३॥

पंचमेराजविध्वंसंषष्ठेसर्वार्थनाशनम् ॥
सप्तमेव्याधिदुःखानिअष्टमेमृत्युमादिशेत् ॥८४॥

अर्थ—पांचवेमें राज्यका विध्वंस और छठेमें संपूर्ण अर्थोंका नाश और सातवेमें व्याधि और दुःख और आठवेमें मृत्युका होनी कहाहै ॥ ८४ ॥

कालत्रयेदिनान्यष्टौविपरीतंयदावहेत् ॥
तदादुष्टफलंप्रोक्तंकिंचिन्न्यूनंतुशोभनम् ॥ ८५ ॥

अर्थ—प्रातःकाल और मध्याह्न और सायंकाल इन तीनों कालोंमें यदि पूर्वोक्त विपरीत स्वरोंका उदय यदि आठ दिनतक बराबर चले तो उस समय दुष्ट फल कहा है यदि कुछ कम विपरीत चलै तो शुभ फलजानना ॥

प्रातर्मध्याह्नयोश्चंद्रःसायंकालेदिवाकरः ॥
तदानित्यंजयोलाभोविपरीतंविवर्जयेत् ॥८६ ॥

अर्थ—जिस दिन प्रातःकाल और मध्याह्नको चंद्रमाका

स्वर और सायंकालको सूर्यका स्वर चलै तो उस दिन जय और लाभ कहाहै और विपरीत चलैं तो वर्जदे अर्थात् अनिष्ट फल होताहै ॥ ८६ ॥

वामेवादक्षिणेवापियत्रसंक्रमतेशिवः ॥
कृत्वातत्पादमादौचयात्राभवतिसिद्धिदा ॥८७॥

अर्थ—यात्राके समय वाम वा ददिण जो स्वर चलताहो उसी चरणको प्रथम आगे रखकर यात्रा करै तो वह यात्रा सिद्धिकी दाता होतीहै ॥ ८७ ॥

चंद्रःसमपदःकार्योरविस्तुविषमःसदा ॥
पूर्णपादंपुरस्कृत्ययात्राभवतिसिद्धिदा ॥ ८८ ॥

अर्थ—चंद्रमाका स्वर चलता होय तो सम पद २-४ ६-आदि आगे रखने और सूर्यका स्वर चलता होय तो विषम पद १-३-५-आदि आगे रखने इस प्रकार पूर्ण पाद आगे रखनेसे यात्रा सिद्धिको दाता होतीहै८८

यत्रांगेवहतेवायुस्तदंगकरसत्तलात् ॥
सुप्तोत्थितोमुखंस्पृष्ट्वालभतेवांछितंफलम् ॥८९॥

अर्थ—जिस अंगका स्वर चलताहो उसी अंगके हाथके तलसे शयनसे उठ कर मनुष्य मुखको स्पर्श करै तो वांछित फलको प्राप्त होताहै ॥ ८९ ॥

परदत्तेतथाग्राह्येगृहान्निर्गमनेऽपिच ॥
यदंगेवहतेनाडीग्राह्यंतेनकरांघ्रिणा ॥ ९० ॥

अर्थ—दूसरेको दान देने वा ग्रहण करनेमें वा घरसे बाहर जानेमें जिस अंगकी नाडी चलतीहो उसी हाथ वा पैरको आगे करके वस्तुको ग्रहण करै तो ॥ ९० ॥

नहानिःकलहोनैवकंटकैर्नापिभिद्यते ॥
निवर्त्ततेसुखीचैवसर्वोपद्रववर्जितः ॥ ९१ ॥

अर्थ—न हानिहो कलह हो—और न कंटक (शत्रु) से विंधै और वह सर्वदा सुखी रहै और सब उपद्रवोंसे वर्जित रहैगा ॥ ९१ ॥

गुरुबंधुनृपामात्येष्वन्येषुशुभदायिनी ॥
पूर्णांगेखलुकर्त्तव्याकार्यसिद्धिर्मनःस्थिता॥९२॥

अर्थ—गुरु—बंधु—राजा मंत्री आदिसें शुभ-देनेवाली कार्यकी सिद्धि करनी होय तो पूर्ण हाथसे अर्थात् हाथमें कोई फल आदिलेकर करनी वह सिद्धि मनवांछित फलको देतीहै ॥ ९२ ॥

आग्नेचोराधमर्धर्मा अन्येषांवादिनिग्रहः ॥
कर्त्तव्याःखलु रिक्तायां जयलाभसुखार्थिभिः९३

अर्थ—अग्निका दाह—चोर—अधर्म कार्य और वादिका निग्रह (दंड) करना होय तो रिक्त (खाली) हाथसे ही जय लाभ सुखके अभिलाषी मनुष्य कार्य सिद्धिको करै ॥ ९३ ॥

दूरदेशेविधातव्यंगमनंतुहिमद्युतौ ॥

अभ्यर्णदेशेदीतितुतस्मादिति केचन ॥ ९४ ॥

अर्थ—कोई ऐसे कहतेहैं कि दूर देशमें जाना होय तो चंद्रमाके स्वरमें और समीपके देशमें जाय तो सूर्यके स्वरमें गमन करै ॥ ९४ ॥

यत्किंचित्पूर्वमुद्दिष्टंलाभादिसमरागमः ॥
तत्सर्वंपूर्णनाडीषुजायते निर्विकल्पकम् ॥ ९५॥

अर्थ—जो कुछ लाभ आदि प्रथम कहाहै वह सब युद्धके समय तभी निःसंदेह होताहै जब नाडी पूरे २ स्वरसे चलतीहो ॥ ९५ ॥

शून्यनाड्याविपर्यस्तंयत्पूर्वंप्रतिपादितम् ॥
जायतेनान्यथाचैवयथासर्वज्ञभाषितम् ॥ ९६ ॥

अर्थ—और शून्य नाडी चलती होय तो वह पूर्वोक्त फल शिवजीके कथनानुसार अन्यथा(उलटा)होताहै९६

व्यवहारेखलोच्चाटेद्वेषिविद्यादिवंचके ॥
कुपितस्वामिचोराद्येपूर्णस्थाःस्युर्भयंकराः॥९७

अर्थ—व्यवहार—दुष्ट—मनुष्यका उच्चाटन-वैरी-विद्या आदिसे ठगना—स्वामीका कोप और चौर आदि क्रूर कामोंमें पूर्ण स्वर भयके कर्ता होतेहैं अर्थात् अच्छे नहीं.

दूराध्वनिशुभश्चंद्रोनिर्विघ्नोभीष्टसिद्धिदः ॥
प्रवेशकार्यहेतौचसूर्यनाडीप्रशस्यते ॥ ९८ ॥

अर्थ—जो मनुष्य दूर मार्गमें जायरा चाहै उसको चंद्र

माका स्वर शुभहै और निर्विघ्न वांछितकी सिद्धि करताहै और प्रवेशके कार्यमें सूर्यकी नाडी श्रेष्ठ होतीहै॥ ९८॥

अयोग्येयोग्यतानाड्यायोग्यस्थानेऽप्ययोग्यता॥
कार्यानुबंधनोजीवोयथारुद्रस्तथाचरेत् ॥९९॥

अर्थ—अयोग्य कार्यमें नाडीकी योग्यता और योग्य कार्यमें अयोग्यताको कार्यका अनुबंधी जीव प्राप्त होताहै इससे जैसा स्वरहो तैसाही आचरण मनुष्य करै॥ ९९॥

चन्द्रचारेविषहतेसूर्योबलिवशंनयेत् ॥
सुषुम्नायांभवेन्मोक्षएकोदेवस्त्रिधास्थितः॥१००॥

अर्थ—चंद्रमाका स्वर चलै तो किसीके किये अपराधकोभी मनुष्य सह लेताहै—और सूर्यका स्वर चलै तो बलवान्‌भी वशमें हो सकताहै और सुषुम्ना नाडीका स्वर होय तो मोक्ष होताहै इस प्रकार एक देव (स्वर) तीन प्रकारसे स्थितहै ॥ १०० ॥

शुभान्यशुभकार्याणिक्रियंतेहर्निशंयदा ॥
तदाकार्यानुरोधेनकार्यंनाडीप्रचालनम् ॥१०१॥

अर्थ—जिस समय रात दिन शुभ और अशुभ किये जांय—तब कार्यके अनुसार नाडीको चलावे ॥ १०१॥

अथ इडा ।

स्थिरकर्मण्यलंकारेदूराध्वगमनेतथा ॥
आश्रमेधर्मप्रासादे वस्तूनांसंग्रहे पिच ॥ २ ॥

अर्थ—स्थिरकार्य—भूषण—दूर मार्गमें गमन-आश्रम-

धर्म—प्रासाद (मंदिर) और घरकी वस्तुओंके संग्रह (संचय) करनेमें और ॥ १०२ ॥

वापीकूपतडागादिप्रतिष्ठास्तंभदेवयोः ॥
यात्रादानेविवाहेचवस्त्रालंकारभूषणे ॥ १०३ ॥

अर्थ—बावडी—कूप—तलाव—और देव—स्तंभ इनकी प्रतिष्ठा—और यात्रा—दान—विवाह—वस्त्र—अलंकार—भूषण इनमें ॥ १०३ ॥

शांतिकेपौष्टिकेचैव दिव्यौषधिरसायने ॥
स्वस्वामिदर्शनेमित्रेवाणिज्येकणसंग्रहे ॥१०४॥

अर्थ—शांति और पुष्टिके कर्म—दिव्य औषधि—रसायन—अपने स्वामीके दर्शन—मित्र—और व्यापार और कण (अन्न) के संग्रहमें ॥ १०४ ॥

गृहप्रवेशेसेवायांकृषौचबीजवापने ॥
शुभकर्मणिसंधौचनिर्गमेचशुभःशशी ॥ १०५ ॥

अर्थ—और गृहप्रवेश—सेवा—खेती—बीजका बोना—शुभ कर्म—और संधि (मेल) और गमन इनमें चंद्रमाका स्वर (इडा) शुभ होताहै ॥ १०५ ॥

विद्यारम्भादिकार्येषुबांधवानांचदर्शने ॥
जन्ममोक्षेचधर्मेचदीक्षायांमंत्रसाधने ॥ १०६ ॥

अर्थ—और विद्यारंभ आदि कार्योंमें और बांधवोंके

दर्शनमें—जन्म और मोक्षमें धर्ममें और यज्ञ आदिकी दीक्षामें—और मंत्रकी सिद्धिमें ॥ १०६ ॥

कालविज्ञानसूत्रेतुचतुष्पादगृहागमे ॥
कालव्याधिचिकित्सायांस्वामिसंबोधनेतथा १०७

अर्थ—कालका ज्ञान व सूत्र और चतुष्पादों (पशु) के घरमें. आगमनमें—कालकी व्याधिकी चिकित्सामें और स्वामीके संबोधन (बुलावना) में ॥ १०७ ॥

गजाश्वारोहणेधन्विर्गजाश्वानांचबंधने ॥
परोपकरणेचैवनिधीनांस्थापनेतथा ॥ १०८ ॥

अर्थ—हाथी व घोडेकी सवारी—धनुष्यका धारण—हाथी व घोडेका बांधना परका उपकार करना—और निधी (खजाना) का स्थापन करना ॥ १०८ ॥

गीतवाद्यादिनृत्यादौनृत्यशास्त्रविचारणे ॥
पुरग्रामनिवेशेचातिलकक्षेत्रधारणे ॥ १०९ ॥

अर्थ—गीत वादित्र (बाजा) नृत्य और नृत्य शास्त्रका विचार—पुर और ग्रामका प्रवेश और तिलक और खेतका धारण इनमेंभी चंद्र नाडी (इडा) शुभ होतीहै ॥ १०९ ॥

आर्तिशोकविषादेचज्वरितेमूर्च्छितेपिवा ॥
स्वजनस्वामिसंबंधेअन्नादेर्दारुसंग्रहे ॥ ११० ॥

अर्थ—रोग—शोक—विषाद (उदासी) ज्वर पीडा—मूर्च्छा—अपने जन और स्वामीके संबंधमें और अन्न

और काठके संग्रहमेंभी चंद्र नाडी श्रेष्ठहै ॥ ११० ॥

स्त्रीणांदंतादिभूषायांवृष्टेरागमनेतथा ॥
गुरुपूजाविषादीनांचालनेचवरानने ॥ १११ ॥

अर्थ—स्त्रियोंको दंत आदिका भूषण—वृष्टिका आगमन गुरुकी पूजा और विष आदिका चालन (बाहिर-निकासना) में हे पार्वति चंद्र नाडी श्रेष्ठहै ॥ १११ ॥

इडायांसिद्धिदंप्रोक्तंयोगाभ्यासादिकर्मच ॥
तत्रापिवर्जयेद्वायुंतजआकाशमेवच ॥ ११२ ॥

अर्थ—इडा नाडीमें योगाभ्यास आदि कर्म सिद्धिका दाता कहाहै तथापि इडा नाडीमें जब वायु और आकाश तत्व वहते हों तब इडाकोभी वर्ज दे॥ ११२॥

सर्वकार्याणिसिद्ध्यंति दिवारात्रिगतान्यपि ॥
सर्वेषुशुभकार्येषुचंद्रचारःप्रशस्यते ॥ ११३ ॥

अर्थ—दिन और रात्रिके सब काम इडानाडीमें सिद्ध होतेहैं और संपूर्ण शुभ कार्योंमें चंद्रमाका चार (इडा) उत्तम होता है ॥ ११३ ॥

अथ पिंगला।

कठिनक्रूरविद्यानांपठनेपाठनेतथा ॥
स्त्रीसंगवेश्यागमनेमहानौकाधिरोहणे ॥ ११४ ॥

अर्थ—कठिन और क्रूर (मारण आदि) विद्याओंके पठने व पढानेमें—स्त्रीका संग और वेश्याके गमनमें और महानौका (जहाज) के चढनेमें ॥ ११४ ॥

भ्रष्टकार्यैसुरापानेवीरमंत्र्युपासने ॥ विह्वलो-
द्ध्वंसदेशादौविषदानेचवैरिणाम् ॥ ११५ ॥

अर्थ—भ्रष्टकार्य-मदिराकापान-वीरमंत्रआदिकी उपा-
सना-विह्वलहोना-देशका विध्वंस-और वैरियोंको विष
देना-इनमें और ॥ ११५ ॥

शास्त्राभ्यासेचगमनेमृगयापशुविक्रये ॥
इष्टिकाकाष्ठपाषाणरत्नघर्षणदारणे ॥ ११६ ॥

अर्थ—शास्त्रका अभ्यास—गमन—मृगया पशुओंका
बेचना-ईंट काठ-पत्थर रत्न इनका घिसना और तोडना
इनमें सूर्यनाडी (पिंगला) श्रेष्ठ है ॥ ११६ ॥

गत्यभ्यासेयंत्रतंत्रेदुर्गपर्वतरोहणे ॥ द्यूते
चौर्येगजाश्वादिरथसाधनवाहने ॥ ११७ ॥

अर्थ—गमनका अभ्यास-यंत्र-तंत्र-किला और पर्वत-
पर चढना-द्यूत (जुआ) और चोरीकरना-हाथी घोडा
रथ-इनको साधना व चलाना-इनमें ॥ ११७ ॥

व्यायाममारणोच्चाटेषट्कर्मादिकसाधने ॥
यक्षिणीयक्षवेतालविषभूतादिनिग्रहे ॥ ११८ ॥

अर्थ—व्यायाम (कसरत) मारण-उच्चाटन-षट्क-
र्मोंको सिद्धकरना-और यक्षिणी यक्ष वेताल-विष भूत
आदिका निग्रह (रोकना) इनमें ॥ ११८ ॥

खरोष्ट्रमहिषादीनांगजाश्वारोहणेतथा ॥
नदीजलौघतरणेभेषजेलिपिलेखने ॥ ११९ ॥

अर्थ—गधा-ऊंट भैंसा हाथी घोडा इनपर चढना और नदीके जल वेगसे पार उतरना औषध करना और लीपना व लिखना-इनमें ॥ ११९ ॥

मारणेमोहनेस्तंभेविद्वेषोच्चाटनेवशे ॥
प्रेरणेकर्षणेक्षोभेदानेचक्रयविक्रये ॥ १२० ॥

अर्थ—मारना-मोहना स्तंभ (रोक) करना विद्वेष (वैर) करना उच्चाटन और वशमें करना प्रेरण और खेती करना क्षोभ दान और लेन देनमें ॥ १२० ॥

प्रेताकर्षणविद्वेषशत्रुनिग्रहणेपिच ॥ खड्ग-
हस्तेवैरियुद्धेभोगवाराजदर्शने ॥ भोज्येस्ना-
नेव्यवहारेदीप्तकार्येरविःशुभः ॥ १२१ ॥

अर्थ—प्रेतका आकर्षण (बुलाना) शत्रुका निग्रह दंड खड्ग (तलवार) को हाथमें लेना वैरीके संग युद्ध भोग वा राजाके दर्शनमें भोजन व स्नान और व्यवहार-दीप्त (प्रकाशित कार्य) इनमें सूर्यनाडी (पिंगला) शुभकहीहै॥

भुक्तमार्गेणमंदाग्नौस्त्रीणांवश्यादिकर्मणि ॥
शयनंसूर्यवाहेनकर्तव्यंसर्वदाबुधैः ॥ १२२ ॥

अर्थ—भोजनके द्वारा मंदाग्निकरनेमें और स्त्रियोंको वशमें करना सोना ये सब काम पंडितजन सूर्य स्वरके चलते समयमें करे ॥ १२२ ॥

क्रूराणिसर्वकर्माणिचराणिविविधानिच ॥
तानिसिद्ध्यंतिसूर्येणनात्रकार्याविचारणा१२३॥

अर्थ–संपूर्णक्रूरकर्म और अनेक प्रकारके चरकर्म वे सब सूर्यकी नाडी (पिंगला) में सिद्ध होतेहैं इसमें कोई विचार नहीं करना ॥ १२३ ॥

अथ सुषुम्ना ।

क्षणंवामेक्षणंदक्षेयदावहतिमारुतः ॥
सुषुम्नासाचविज्ञेयासर्वकार्यहरास्मृता ॥ १२४ ॥

अर्थ–जो पवन क्षणभर वामभाग और क्षणभर दक्षिण भागमें चलै वह नाडी सुषुम्ना जाननी और सुषुम्ना सब कार्योंको हारनेवाली कहीहै ॥ १२४ ॥

तस्यांनाड्यांस्थितोवह्निर्ज्वलतेकालरूपकः ॥
विषवत्तंविजानीयात्सर्वकार्यविनाशनम् ॥ १२५ ॥

अर्थ–उस नाडीमें ठिकी हुयी अग्नि काल रूप जलती है उस अग्निको विष वाली और सब कार्योंका नाशक जानना ॥ १२५ ॥

यदानुक्रममुल्लंघ्ययस्यनाडीद्वयंवहेत् ॥
तदातस्यविजानीयादशुभंनात्रसंशयः ॥ १२६ ॥

अर्थ–जब अपने २ स्वाभाविक क्रमका अवलंघन करके जिस पुरुषकी दोनों नाडी चलै तब उस पुरुषका अशुभ जानना इसमें संदेह नहींहै ॥ १२६ ॥

क्षणंवामेक्षणंदक्षेविषमंभावमादिशेत् ॥
विपरीतंफलंज्ञेयंज्ञातव्यंचवरानने ॥ १२७ ॥

अर्थ–क्षणभर वाम भाग और क्षणभर दक्षिण

भागमें पवन चले तो उसको विषम कहै और हे पार्वति उसका विपरीत फल जानना ॥ १२७ ॥

उभयोरेवसंचारंविषवंतंविदुर्बुधाः ॥
नकुर्यात्क्रूरसौम्यानितत्सर्वंविफलंभवेत्॥१२८॥

अर्थ—दोनों नाडियोंके संचारको विषवान् ऐसा पंडित जन कहतेहैं उसमें क्रूर और सौम्य कर्म न करै यदि करै तो वे सब निष्फल होतेहैं ॥ १२८ ॥

जीवितेमरणेप्रश्नेलाभालाभेजयाजये ॥
विषमेविपरीतेचसंस्मरेज्जगदीश्वरम् ॥ १२९ ॥

अर्थ—जीने—मरण—प्रश्न—लाभ—अलाभ—जय—पराजय—विषम—और विपरीत स्वरके चलनेमें जगदीश्वरका स्मरण करै ॥ १२९ ॥

ईश्वरेचिंतितेकार्यंयोगाभ्यासादिकर्मच ॥
अन्यत्तत्रनकर्तव्यंजयलाभसुखैषिभिः ॥१३०॥

अर्थ—ईश्वरका चिंतन करके उस समय योगाभ्यास आदि कर्म ही करना—और जय लाभ सुखके अभिलाषी उस समय और कोई काम न करैं॥ १३०॥

सूर्येणवहमानायांसुषुम्नायांमुहुर्मुहुः ॥
शापंदद्याद्वरंदद्यात्सर्वथैवतदन्यथा ॥ १३१ ॥

अर्थ—जब सूर्यकी नाडी सुषुम्ना वारंवार वहै तो उस समय जो शाप अथवा वर दे वह सब अन्यथा (विपरीत) होताहै ॥ १३१ ॥

नाडीसंक्रमणेकालेतत्त्वसंगमनेपिच ॥
शुभंकिंचिन्नकर्त्तव्यंपुण्यदानानिकोटिधा १३२॥

अर्थ—नाडीके संचलन (मेल) के और तत्वोंके संचलनमें कोई शुभ कर्म न करना और पुण्य दान आदि कर्मभी न करने ॥ १३२ ॥

विषमस्योदयोयत्रमनसाऽपिनचिंतयेत् ॥
यात्राहानिकरीतस्यमृत्युःक्लेशोनसंशयः ॥ ३३॥

अर्थ—जिस समय विषम स्वरका उदयहो तब मनसे भी किसी कार्यकी चिंता न करै जो उस मनुष्यकी यात्रा हानिकी करनेवाली होतीहैं और मृत्यु अथवा क्लेश होताहै इसमें संदेह नहीहै ॥ १३३ ॥

पुरोवामोर्ध्वतश्चंद्रोदक्षाधः पृष्ठतोरविः ॥
पूर्णरिक्तविवेकोयंज्ञातव्योदैशिकैःसदा ॥१३४॥

अर्थ—जब प्रथम वाम स्वर और पीछे चंद्र स्वरहो और फिर दक्षिण स्वरके पीछे सूर्य स्वरका उदयहो ये दोनों क्रम पूर्ण और रिक्त (खाली) सदैव पंडितों-ने जानने ॥ १३४ ॥

ऊर्ध्ववामाग्रतोदूतोज्ञेयोवामपथिस्थितः ॥
पृष्ठेदक्षेतथाऽधस्तात्सूर्यवाहागतःशुभः॥१३५॥

अर्थ—वाम स्वरसे पीछे वा पहिले यदि आताहुआ दूत वाम भागमें स्थितहो और दक्षिण स्वरके पीछे वा पहिले आताहुआ दूत दक्षिण भागमें स्थित होय तो शुभ होताहै ॥ १३५ ॥

अनादिर्विषमःसंधिर्निराहारोनिराकुलः ॥
परेसूक्ष्मेविलीयेत सासंध्यासद्भिरुच्यते ॥१३६॥

अर्थ—अनादि जो विषम संधि (सुषुम्ना) निराहार और निराकुल होकर पर सूक्ष्म ब्रह्ममें लीन हो जाय अर्थात् एक रस चलती हुयी जिस सुषुम्नासे ब्रह्मकी प्राप्ति हो जाय उस सुषुम्नाको सज्जन संध्या कहतेहैं १३६

नवेदंवेदइत्याहुर्वेदोवेदोनविद्यते ॥
परात्माविद्यतेयेनसवेदोवेदउच्यते ॥ १३७ ॥

अर्थ—पंडित जन वेदको वेद नहीं कहते और वेद वेदहैं भी नहीं—किंतु परात्मा जिससे जाना जाय वहीं ज्ञानियोंने वेद कहाहै ॥ १३७ ॥

नसंध्यासंधिरित्याहुःसंध्यासंधिर्निगद्यते ॥
विषमः संधिगःप्राणःससंधिस्संधिरुच्यते॥१३८॥

अर्थ—संध्याको संधि पंडित जन नहीं कहते और न संध्याको संधि कह सकतेहैं किंतु जब विषम संधिमें प्राणहो वही संधि कहातीहै ॥ १३८ ॥

इति नाडीभेदः।

श्रीदेव्युवाच ॥ देवदेवमहादेवसर्वसंसारतारक ॥
स्थितंत्वदीयहृदयेरहस्यंवदमेप्रभो ॥ १३९ ॥

अर्थ—पार्वती बोली कि हे देवों के देव! हे महादेव ! हे सब संसारके तारक ! जो रहस्य (गुप्त) आपके हृदयमें स्थितहै हे प्रभो ! वह मुझे कहो ॥ १३९ ॥

ईश्वरउवाच ॥ स्वरज्ञानरहस्यात्तुनकाचिच्चेष्ट-
देवता ॥ स्वरज्ञानरतोयोगीसयोगीपरमोमतः ॥

अर्थ—महादेव बोले कि—स्वरज्ञानके रहस्यसे परे कोई इष्ट देवता नहींहै—जो योगी स्वरके ज्ञानमें रहतेहैं वही योगी परम मानाहै ॥ १४० ॥

पंचतत्त्वाद्भवेत्सृष्टिस्तत्त्वेतत्त्वंप्रलीयते ॥
पंचतत्त्वंपरंतत्त्वंतत्त्वातीतंनिरंजनम् ॥ १४१ ॥

अर्थ—पांच तत्वोंसे सृष्टि होतीहै और तत्वमें ही तत्व लीन होताहै—पांच तत्वही परम तत्वहै और निरंजन (ब्रह्म) तत्वोंसे अतीत (परे) हैं ॥ १४१ ॥

तत्त्वानांनामविज्ञेयंसिद्धियोगेनयोगिनाम् ॥
भूतानांदुष्टचिह्नानिजानातीहस्वरोत्तमः ॥ १४२ ॥

अर्थ—योगीजन सिद्धिके योगसे तत्वोंका नाम जाने जो मनुष्य स्वरोंको ही उत्तम समझताहै वह सम्पूर्णप्राणियोंके दुष्ट चिन्होंको जानसकता है ॥ १४२ ॥

पृथिव्यापस्तथातेजोवायुराकाशमेवच ॥
पंचभूतात्मकंविश्वंयोजानातिसपूजितः ॥ १४३ ॥

अर्थ—जो मनुष्य पृथिवी—जल—तेज—वायु और आकाश इन पंचभूतात्मक विश्वको जानता है वही पूजित होता है ॥ १४३ ॥

सर्वलोकस्थजीवानांनदेहोभिन्नतत्त्वकः ॥
भूलोकात्सत्यपर्यंतंनाडीभेदःपृथक्पृथक् १४४

अर्थ—भूलोकसे सत्यलोकपर्यंत सबलोकमें स्थित जितने जीवहैं उनका देह भिन्न २ तत्वरूप नहींहै परंतु नाडीका भेद पृथक् २ है ॥ १४४ ॥

वामेवादक्षिणेवाऽपिउदयाःपंचकीर्तिताः ॥
अष्टधातत्त्वविज्ञानंशृणुवक्ष्यामिसुंदरि ॥१४५॥

अर्थ—वामभाग वा दक्षिण भागमें पांच२उदय कहे हैं। हे सुंदरि उन तत्वोंको विज्ञान आठ प्रकारका मैं कहताहूं तू सुन ॥ १४५ ॥

प्रथमेतत्त्वसंख्यानं द्वितीयेश्वाससंधयः ॥
तृतीयेस्वरचिह्नानिचतुर्थेस्थानमेवच ॥ १४६ ॥

अर्थ—प्रथम तत्वोंका संख्यान (गिनती) दूसरा भेद श्वासकी संधी—तीसरा भेद स्वरोंका चिन्ह चौथा भेद स्वरोंका स्थान ॥ १४६ ॥

पंचमेतस्यवर्णाश्चषष्ठेतुप्राणएवच ॥
सप्तमेस्वादसंयुक्ताअष्टमेगतिलक्षणम् ॥ १४७ ॥

अर्थ—पांचवा भेद तत्वोंका रंग-छठे भेदमें प्राण-सातवेंमें स्वादका संयोग-आठवेभेदमें गतिके लक्षण-॥ १४७

एवमष्टविधंप्राणंविषुवंतंचराचरम् ॥
स्वरात्परतरंदेविनान्यथात्वंबुजेक्षणे ॥ १४८ ॥

अर्थ—इस प्रकार चराचरमें व्यापक आठ प्रकारका प्राण होता है—हेदेवि स्वरसे परे अन्यथा (इतर) ज्ञान नहीं है ॥ १४८ ॥

निरीक्षितव्यंयत्नेनसदाप्रत्यूषकालतः ॥
कालस्यवंचनार्थायकर्मकुर्वंतियोगिनः ॥१४९॥

अर्थ—प्रातःकालसे लेकर सदैव स्वरको देखना—क्योंकि योगिजन कालक्षेपके लिये कर्मोंको करतेहैं परन्तु उनको स्वर और तत्वकी पहिचान रहतीहै ॥ १४९ ॥

श्रुत्योरंगुष्ठकौमध्यांगुल्यौनासापुटद्वये ॥
वदनप्रांतकेचान्यांगुलीर्दद्याच्चनेत्रयोः ॥ १५० ॥

अर्थ—कानोंमें दोनों अंगूठे—और दोनों नासिकाके पुटोंमें मध्यकी दोनों अंगुली मुखके प्रान्तभाग (दोनों-होठोंका मेल) में और नेत्रोंमें शेष अंगुली अर्थात् नेत्रोंमें तर्जनी और अनामिका और कनिष्ठ मुखप्रांतमें लगावे ॥ १५० ॥

अस्यांतस्तुपृथिव्यादितत्त्वज्ञानंभवेत्क्रमात् ॥
पीतश्वेतारुणश्यामैर्बिंदुभिर्निरुपाधिकम् ॥१५१

अर्थ—इसके बीचमें पृथिवी आदि तत्वोंका ज्ञान क्रमसे पीत—श्वेत अरुण (लाल) और श्याम बिंदुओंसे उपाधिरहित (स्पष्ट) होताहै अर्थात् पृथिवीका पीत-वर्ण जलका श्वेत तेजका लाल वायुका श्याम और आकाशका चित्र वर्ण होताहै ॥ १५१ ॥

दर्पणेनसमालोक्य तत्रश्वासंविनिक्षिपेत् ॥
आकारैस्तुविजानीयात्तत्त्वभेदंविचक्षणः ॥१५२

अर्थ—दर्पणमें मुखको देखकर श्वासको छोडे. और आकारोंको देखकर तत्वके भेदको पंडित जन जाने १५२

चतुरस्रंचार्धचंद्रंत्रिकोणंवर्त्तुलंस्मृतम् ॥
बिंदुभिस्तुनभोज्ञेयमाकारैस्तत्त्वलक्षणम्॥१५३

अर्थ—चतुरस्र (चोकोर)-अर्द्धचंद्राकार-त्रिकोण (त्रिकोणा) वर्तुल (गोला) बिंदुओंका आकार नेत्रोंको आगे दीखै तो आकाशतत्वका लक्षण जानना॥ १५३॥

मध्येपृथ्वीह्यधश्चापश्चोर्ध्ववहतिचानलः ॥
तिर्यग्वायुप्रवाहश्च नभोवहतिसंक्रमे ॥ १५४ ॥

अर्थ—मध्यमें पृथिवी-और नीचे जल-और ऊपर अग्नि और तिरछा वायुका प्रवाह होताहै और दोस्वरोंका संक्रम चलता होय तो आकाश तत्वका चलना जानना ॥ १५४ ॥

आपःश्वेताःक्षितिःपीतारक्तवर्णोहुताशनः ॥
मारुतोनीलजीमूतआकाशःसर्ववर्णकः ॥१५५॥

अर्थ—जलोंका श्वेतवर्ण—पृथिवीका पीत—अग्निका रक्त—और पवन—नीलमेघवर्ण—और आकाश सब वर्णरूप होताहै ॥ १५५ ॥

अब स्थानपरत्वसे तत्त्वज्ञान।

स्कंधद्वयेस्थितोवह्निर्नाभिमूलेप्रभंजनः ॥
जानुदेशेक्षितिस्तोयं पादांतेमस्तकेनभः १५६॥

अर्थ—दोनों कंधोंपर अग्नि—नाभिके मूलमें पवन—

जानु (गोडे) देशमें पृथिवी—पाद(चरण)के अंतमें जल—और मस्तकमें आकाश तत्व स्थित रहताहै ॥ १५६ ॥

अब स्वादसेतत्वज्ञानप्रकार ।

माहेयंमधुरंस्वादेकषायंजलमेवच ॥
तीक्ष्णंतेजःसमीरोम्लआकाशंकटुकंतथा ॥१५७

अर्थ—पृथिवीका स्वर मीठा—जलका स्वर खारा—तेजका स्वर तीखा—पवनका स्वर अम्ल—और आकाशका स्वर कटु (कडवा) होताहै ॥ १५७ ॥

अब गतीसे तत्त्वज्ञान ।

अष्टांगुलंवहेद्वायुरनलश्चतुरंगुलं ॥ द्वादशांगुलिमाहेयंवारुणंषोडशांगुलम् ॥ १५८ ॥

अर्थ—वायुका स्वर आठ अंगुल—पवनका चार अंगुल—पृथिवीका स्वर बारह अंगुल—और जलका स्वर सोलह अंगुल चलताहै ॥ १५८ ॥

ऊर्ध्वेमृत्युरधःशांतिस्तिर्यगुच्चाटनंतथा ॥
मध्येस्तंभंविजानीयान्नभःसर्वत्रमध्यमम्॥१५९॥

अर्थ—ऊर्ध्व स्वर चलै तो मृत्यु—और नीचा स्वर चलै तो शांति—तिरछा चलै तो उच्चाटन—मध्यका स्वर चलै तो स्तंभ (रोकना) ये काम करै—और आकाश तत्व सब कार्योंमें मध्यम जानना ॥ १५९ ॥

पृथिव्यांस्थिरकर्माणिचरकर्माणिवारुणे ॥
तेजसिक्रूरकर्माणिमारणोच्चाटनेऽनिले॥ १६० ॥

अर्थ-पृथिवी तत्वमें स्थिर कार्य-और जलमें चर कार्य-और तेजमें क्रूर कार्य और मारुत (पवन) में मारण और उच्चाटन कर्म करनेसे सिद्ध होतेहैं॥ १६०॥

व्योम्निकिंचिन्नकर्त्तव्यमभ्यसेद्योगसेवनम् ॥
शून्यतासर्वकार्येषुनात्रकार्याविचारणा ॥ ६१ ॥

अर्थ-आकाशमें कुछ काम न करे किंतु योगके सेवनका अभ्यास करे और उसमें सब काम शून्य होतेहैं इसमें विचार न करना ॥ १६१ ॥

पृथ्वीजलाभ्यांसिद्धिःस्यान्मृत्युर्वन्हौक्षयोऽनिले
नभसोनिष्फलंसर्वज्ञातव्यंतत्त्ववादिभिः॥१६२॥

अर्थ-पृथिवी और जल तत्वसे सिद्धि वन्हि तत्वमें मृत्यु-और पवनमें क्षय (नांश॰) और आकाश तत्वमें सब काम निष्फल-तत्ववादियोंको जानने ॥ १६२ ॥

चिरलाभःक्षितेर्ज्ञेयस्तत्क्षणेतोयतत्त्वतः ॥
हानिःस्याद्वह्निवाताभ्यांनभसोनिष्फलंभवेत् ॥

अर्थ-पृथ्वी तत्वसे अधिक लाभ हो, जल तत्वसे तत्क्षण लाभ हो, वायु और अग्नि तत्वसे हानि प्रकार, आकाश तत्वसे निष्फल जानना ॥ १६३ ॥

पीतःशनैर्मध्यवाहीहनुर्यावद्गुरुर्ध्वनिः ॥
कवोष्णःपार्थिवोवायुःस्थिरकार्यप्रसाधकः १६४

अर्थ-पीत वर्ण-और शनैः२वा मध्यम चलनेवाला और हनु (ठोडी) पर्यंत जिसका शब्द गुरु (भारी)

हो और जो किंचित् उष्णहो ऐसे पृथिवी संबंधि वायु (स्वर) को स्थित कार्योंका साधक कहतेहैं ॥ १६४ ॥

अधोवाहीगुरुध्वानःशीघ्रगःशीतलःस्थितः ॥
यः षोडशांगुलोवायुः सआपः शुभकर्मकृत् १६५

अर्थ—जो नीचेको वहै और जिसकी ध्वनी गुरुहो—जो शीघ्र चलै और जिसकी स्थिति शीतलहो और जो सोलह अंगुल हो स्वर जलका होताहै उसमें शुभ काम करने ॥ १६५ ॥

आवर्त्तगश्चात्युष्णश्चशोणाभश्चतुरंगुलः ॥
ऊर्ध्ववाहीचयःक्रूरःकर्मकारीसतैजसः ॥ १६६ ॥

अर्थ—जो आवर्त (भौं) तक चलै—अत्यंत उष्णहो और लालहो और चार अंगुल हो और ऊपरको चलै वह स्वर तेजका है उसमें क्रूर कर्म करने ॥ १६६ ॥

उष्णः शीतःकृष्णवर्णस्तिर्यग्गाम्यष्टकांगुलः ॥
वायुः पवनसंज्ञस्तुचरकर्मप्रसाधकः ॥ १६७ ॥

अर्थ—जो शीतोष्ण हो और कृष्णवर्ण हो और तिरछा चलै और आठ अंगुलका हो वह वायु (स्वर) पवनका है उसमें चर काम सिद्धि होतेहैं. ॥ १६७ ॥

यः समीरः समरसः सर्वतत्त्वगुणावहः ॥
अंबरंतंविजानीयाद्योगिनांयोगदायकम् ॥ १६८ ॥

अर्थ—जो पवन (स्वर) एक रस—और सब तत्वोंके

गुणोंको वहे उस स्वरको आकाशका जानै और वही स्वर योगियोंको योगका दाता होताहै ॥ १६८ ॥

पीतवर्णंचतुष्कोणंमधुरंमध्यमाश्रितम् ॥
भोगदंपार्थिवंतत्त्वंप्रवाहेद्वादशांगुलम् ॥१६९॥

अर्थ-जिसका वर्ण पीतहो चौकोरहो और मधुरहो और मध्यमें वहे और जिसका बारह अंगुलका प्रवाह हो वह पृथिवी तत्व होताहै और भोगका दाता होताहै १६९

श्वेतमर्धेंदुसंकाशंस्वादुकाषायमार्द्रकं ॥
लाभकृद्वारुणंतत्त्वंप्रवाहेषोडशांगुलम् ॥१७०॥

अर्थ-जिसका वर्ण श्वेतहो अर्धचंद्राकारहो स्वादु हो-कसेला आर्द्र (गीला) हो और सोलह अंगुलका जिसके प्रवाह का प्रमाणहो वह जलतत्व होताहै और लाभको देताहै ॥ १७० ॥

रक्तंत्रिकोणंतीक्ष्णंचऊर्ध्वभागप्रवाहकम् ॥
दीप्तंचतैजसंतत्त्वंप्रवाहेचतुरंगुलम् ॥ १७१ ॥

अर्थ-जिसका रंग रक्तहो और जो तिकोनाहो और तीक्ष्ण हो और जिसका प्रवाह ऊपरको हो और जो प्रकाशमान हो और जिसका प्रमाण चार अंगुलका हो वह तत्व तेजसंबंधी जानना ॥ १७१ ॥

नीलंचवर्तुलाकारंस्वाद्वम्लंतिर्यगाश्रितम् ॥
चपलंमारुतंतत्त्वंप्रवाहेऽष्टांगुलंस्मृतम् ॥१७२॥

अर्थ-जो नीला गोल स्वादमें खट्टाहो और तिरछा

चलताहो और जो चपल हो और जिसका प्रवाह आठ अंगुलका हो वह तत्व पवनसंबंधी जानना ॥ १७२ ॥

वर्णाकारेस्वादवाहे अव्यक्तंसर्वगामिनाम् ॥
मोक्षदंनाभसंतत्त्वंसर्वकार्येषुनिष्फलम् ॥१७३॥

अर्थ—वर्ण आकार स्वाद प्रवाहमें जिसकी गति अव्यक्त हो अर्थात् जिसमें सबका हेल मेल पाया जाय वह आकाशसंबंधी तत्व जानना और सब कार्योंमें निष्फल होताहै ॥ १७३ ॥

पृथ्वीजलेशुभेतत्त्वेतेजोमिश्रफलोदयम् ॥
हानिमृत्युकरौपुंसामशुभौव्योममारुतौ॥१७४॥

अर्थ—पृथ्वीतत्व और जलतत्व शुभ होतेहैं—और तेजके तत्वमें मिश्र (मध्यम) फल होताहै और आकाश और वायु तत्वमें हानि व मृत्यु आदि अशुभ फल होतेहैं ॥ १७४ ॥

आपूर्वपश्चिमेपृथ्वीतेजश्चदक्षिणेतथा ॥
वायुश्चोत्तरदिग्ज्ञेयोमध्येकोणगतंनभः ॥१७५॥

अर्थ—पूर्वसे लेकर पश्चिम पर्यंत पृथ्वीतत्व और दक्षिणमें तेज तत्व और उत्तर दिशामें वायु तत्व और मध्यकी दिशामें आकाश तत्व जानना ॥ १७५॥

चंद्रेपृथ्वीजलेस्यातांसूर्येऽग्निर्वायदाभवेत् ॥
तदासिद्धिर्नसंदेहः सौम्यासौम्येषुकर्मसु॥१७६॥

अर्थ—चंद्रमाके स्वरमें पृथ्वी और जल तत्व और

सूर्यके स्वरमें अग्नि तत्व जिस समय हो उस समयमें अच्छे और बुरे कर्मोंकी सिद्धि होतीहै इसमें संदेह नहींहै ॥ १७६ ॥

लाभःपृथ्वीकृतोऽन्हिस्यान्निशायांलाभकृज्जलम्
वन्हौमृत्युःक्षयोवायुर्नभःस्थानंदहेत्क्वचित् १७७

अर्थ—दिनमें पृथ्वी तत्वसे और रात्रिमें जल तत्वसे लाभ होताहै और अग्नि तत्वसे मृत्यु और वायु तत्वसे नाश और आकाश तत्वसे दाहभी कभी २ होजाताहै॥

जीवितव्येजयेलाभेकृष्यांचधनकर्मणि ॥
मंत्रार्थेयुद्धप्रश्नेचगमनागमनेतथा ॥ १७८ ॥

अर्थ—जीवन-जय-लाभ-कृषि-धनका कर्म-मंत्रका कार्य और युद्धका कर्म प्रश्न गमन और आगमन इनमें पृथ्वी तत्व श्रेष्ठ होताहै ॥ १७८ ॥

आयातिवरुणेतत्त्वेशत्रुरस्तिशुभंक्षितौ ॥
प्रयातिवायुतोऽन्यत्रहानिमृत्यूनभोनले ॥१७९॥

अर्थ—यदि जलका तत्व होय तो शत्रुका आगमन समझना और पृथ्वी तत्वमें शुभ होताहै और वायु तत्व होय तो शत्रु अन्यस्थानमें चला जायगा-और आकाश व अग्नि तत्व होय तो शत्रुकी हानि व मृत्यु होगी १७९

पृथिव्यांमूलचिंतास्याज्जीवस्यजलवातयोः ॥
तेजसाधातुचिंतास्याच्छून्यमाकाशतोवदेत् ॥

अर्थ—यदि किसीके पूछनेके समय पृथ्वी तत्व होय

तो मूल (वृक्ष आदि) की चिंता और जल व वायु तत्वमें जीवकी चिंता और तेजके तत्वमें धातुचिंता समझनी और आकाश तत्वमें शून्य कहै अर्थात् किसी चिंता न कहैं ॥ १८० ॥

पृथिव्यांबहुपादाःस्युर्द्विपदस्तोयवायुतः ॥
तेजस्येवचतुष्पादोनभसापादवर्जितः ॥१८१॥

अर्थ–पृथ्वी तत्व होय तो बहुतपादोंसे गमन होताहै अर्थात् बहुतोंके संग गमन करैगा-और जल और वायु तत्व होय तो दोपादोंसे (अकेला) गमन कहै-और तेज तत्व होय तो चार पादोंसे (दोमनुष्यसे) गमन करैगा-और आकाशतत्व होय तो पादोंसे रहित कहै अर्थात् कहींभी नजायगा-ऐसे कहै ॥ १८१ ॥

कुज्ञोवन्हीरविःपृथ्वीसौरिरापःप्रकीर्तितः ॥
वायुस्थानास्थितोराहुर्दक्षरंध्रप्रवाहकः ॥१८२॥

अर्थ–अग्नितत्त्वमें मंगल पृथ्वीतत्वमें सूर्य और जलतत्वमें शनैश्चर और वायुतत्वमें राहु तब जानना यदि दक्षिण स्वर चलताहो ॥ १८२ ॥

जलंचंद्रोबुधःपृथ्वीगुरुर्वातःसितोऽनलः ॥
वामनाड्यांस्थिताःसर्वेसर्वकार्येषुनिश्चिताः १८३

अर्थ–यदि वामस्वर वहता होय तो जलतत्वमें चंद्रमा पृथ्वीतत्वमें बुध पवनतत्वमें बृहस्पति–और

अग्नितत्वमें शुक्र जानना—ये संपूर्णग्रह सर्वकार्योंमें इन पूर्वोक्ततत्वोंमें निश्चयसे स्थित रहतेहैं ॥ १८३ ॥

पृथ्वीबुधोजलादिंदुःशुक्रोवह्नीरविःकुजः ॥
वायूराहुशनीव्योमगुरुरेवप्रकीर्तितः ॥ १८४ ॥

अर्थ—पृथ्वीतत्वमें बुध-जलतत्वमें चंद्रमा और अग्नि तत्वमें-सूर्य-मंगल-और वायु तत्वमें-राहु और शनैश्वर-आकाशतत्वमें बृहस्पति कहाहै ॥ १८४ ॥

प्रवासप्रश्नआदित्येयदिराहुर्गतोऽनिले ॥
तदासौचलितोज्ञेयःस्थानांतरमपेक्षते ॥१८५॥

अर्थ—यदि कोई मनुष्य परदेशमें गयेहुयेका प्रश्नकरै और उससमय सूर्यके स्वरमें राहु स्थित होयतो यह कहै कि वह परदेशी अन्यत्र जानेके लिये उसस्थानसे चलदिया ॥ १८५ ॥

आयातिवारुणेतत्त्वेतत्रैवास्तिशुभंक्षितौ ॥
प्रवासीपवनेऽन्यत्रमृत्युरेवानलेभवेत् ॥१८६॥

अर्थ—यदि प्रश्नकरनेके समय जलतत्त्व वहता होयै तो परदेशीके आगमनको कहै और पृथ्वीतत्वहोय तो परदेशी जहां गया हो वहांही सुखीहै ऐसे कहै-और वायुतत्व होयतो अन्यस्थानमें चलागया ऐसे कहै-और अग्नितत्व होय तो परदेशी मरगया ऐसे कहै ॥१८६॥

पार्थिवेमूलविज्ञानंशुभंकार्यंजलेतथा ॥
आग्नेयेधातुविज्ञानंव्योम्निशून्यंविनिर्दिशेत् १८७

अर्थ—पृथ्वीतत्वमें मूलं (वृक्ष आदि) का जानना-और जलतत्वमें शुभकार्य अग्नितत्वमें धातुओंका ज्ञान-और आकाशतत्वमें शून्यताको कहै अर्थात् किसीके ज्ञानको न कहै ॥ १८७ ॥

तुष्टिःपुष्टीरतिःक्रीडाजयहर्षौधराजले ॥
तेजोवाय्वोश्चसुप्ताक्षोज्वरकंपःप्रवासिनः॥१८८॥

अर्थ—यदि परदेशीके प्रश्नके समयमें पृथ्वी व जल-तत्व होय तो संतोष-पुष्टता-प्रीति-रति-क्रीडा-जय और हर्ष (आनन्द) और यदि तेज व वायुतत्व होय तो सोना व ज्वरसे कंप परदेशीको कहाहै ॥ १८८ ॥

गतायुर्मृत्युराकाशे तत्त्वस्थानेप्रकीर्तिता ॥
द्वादशैताःप्रयत्नेनज्ञातव्यादैशिकैःसदा ॥१८९॥

अर्थ—यदि आकाशतत्व होय तो अवस्थासे रहित परदेशीकी मृत्युको कहै—ये बारह प्रश्न तत्वोंके स्थानमें कहेहैं इनको पंडितजन बडे यत्नसे सदैव जानै॥ १८९ ॥

पूर्वायांपश्चिमेयाम्ये उत्तरस्यांयथाक्रमम् ॥
पृथिव्यादीनिभूतानिबलिष्ठानिविनिर्दिशेत् १९०

अर्थ—पूर्व पश्चिम दक्षिण और उत्तर इन चारों दिशाओंमें क्रमसे पृथिवी—जल—तेज—और वायु ये चारों तत्त्व बलवान् कहे हैं ॥ १९० ॥

पृथिव्यापस्तथातेजोवायुराकाशमेवच ॥
पंचभूतात्मकोदेहोज्ञातव्यश्चवरानने ॥१९१॥

अर्थ—हे पार्वति पृथ्वी जल तेज वायु और आकाश इन पांचों भूतरूपही यह देह जानना अर्थात् इन पांच भूतोंसे ही पैदा होताहै ॥ १९१ ॥

अस्थिमांसंत्वचानाडीरोमचैवतुपंचमम् ॥
पृथ्वीपंचगुणाप्रोक्ताब्रह्मज्ञानेनभाषितम्॥१९२॥

अर्थ—और इस देहमें अस्थि (हाड) मांस त्वचा नाडी और पांचवां रोम ये पांच गुण पृथ्वीके हैं यह बात वेदांत शास्त्रके ज्ञाता ब्रह्मज्ञानी कहते हैं ॥ १९२ ॥

शुक्रशोणितमज्जाश्चमूत्रंलालांचपंचमम् ॥
आपःपंचगुणाप्रोक्ताब्रह्मज्ञानेनभाषितम्॥१९३॥

अर्थ—ब्रह्मज्ञानी कहतेहैं कि वीर्य रुधिर मज्जा मूत्र और पांचवीं लाला ये पांच गुण जलोंके कहेहैं १९३॥

क्षुधातृषातथानिद्राकांतिरालस्यमेवच ॥
तेजःपंचगुणंप्रोक्तंब्रह्मज्ञानेनभाषितम् १९४॥

अर्थ—ब्रह्मज्ञानियोंका कथन है कि क्षुधा तृषा निद्रा कांति और आलस्य ये पांच गुण तेजके कहेहैं॥ १९४॥

धावनंचलनंग्रंथःसंकोचनप्रसारणे ॥
वायोःपंचगुणःप्रोक्ताब्रह्मज्ञानेनभाषितम्॥१९५॥

अर्थ—और वेदांती कहतेहैं कि दौडना चलना गांठ देना सकोडना व पसारणा ये पांच गुण वायुके कहेहैं॥

रागद्वेषौतथालज्जाभयंमोहश्चपंचमः ॥
नभःपंचगुणंप्रोक्तंब्रह्मज्ञानेनभाषितम् ॥ १९६ ॥

अर्थ—और वेदांत शास्त्रके जाननेवालोंका कथन है प्रीति-वैर—लज्जा—भय और पांचवा मोह ये पांच गुण आकाशके इस देहमें होतेहैं ॥ १९६ ॥

पृथ्व्याःपलानिपंचाशच्चत्वारिंशत्तथांभसः ॥
अग्नेस्त्रिंशत्पुनर्वायोर्विंशतिर्नभसोदश ॥१९७॥

अर्थ—इस देहमें पृथ्वी ५० पचास पल—जल ४० चालीस पल—अग्नि ३० तीस पल—और वायु २० वीस पल—और आकाश १० दस पल—होतेहैं अर्थात् पृथ्वी आदि तत्वोंमें अगला २ तत्व क्रमसे दश १० पल कम होताहै ॥ १९७ ॥

पृथिव्यांचिरकालेनलाभश्चापःक्षणाद्भवेत् ॥
जायतेपवनेस्वल्पःसिद्धोप्यग्नौविनश्यति १९८॥

अर्थ—पृथ्वी तत्व होय तो चिरकाल (बहुदिनों) में लाभ-और जल तत्व होय तो उसी क्षणमें और पवन तत्व होय तो थोडा लाभ होताहै और अग्नि तत्व होय तो सिद्ध हुआभी कार्य नष्ट होजाताहै ॥ १९८ ॥

पृथ्व्याःपंचह्यपांवेदा गुणास्तेजोद्विवायुतः ॥
नभस्येकगुणश्चैवतत्त्वज्ञानमिदंभवेत् ॥ १९९॥

अर्थ—पृथ्वीके पांच गुण जलोंके चार गुण—तेजके तीन गुण-वायुके दो गुण और आकाशका एक गुण जानना यही तत्वोंका ज्ञान होताहै ॥ १९९ ॥

फूत्कारकृत्प्रस्फुटितविदीर्णापतिताधरा ॥
ददातिसर्वकार्येषुअवस्थासदृशंफलम् ॥२००॥

अर्थ—फूत्कार करनेवाली- फूटी हुयी और फटी हुयी और वृथा पडी हुयी यह पृथ्वी सब कार्योंमें अपनी अवस्थाके समान फल देती है ॥ २०० ॥

धनिष्ठारोहिणीज्येष्ठानुराधाश्रवणंतथा ॥
अभिजिदुत्तराषाढापृथ्वीतत्त्वमुदाहृतम् ॥ १ ॥

अर्थ—धनिष्ठा—रोहिणी—ज्येष्ठा—अनुराधा—श्रवण—अभिजित् और उत्तराषाढा ये सात नक्षत्र पृथ्वीतत्त कहे हैं ॥२०१॥

पूर्वाषाढातथाश्लेषामूलमार्द्राचरेवती ॥
उत्तराभाद्रपदातोयंतत्त्वंशतभिषक्प्रिये॥२०२॥

अर्थ—पूर्वाषाढा-आश्लेषा-मूल-आर्द्रा-रेवती-उत्तराभाद्रपदा और शतभिषा-ये सात नक्षत्र जलतत्व कहेहैं॥

भरणीकृत्तिकापुष्योमघापूर्वाचफल्गुनी ॥
पूर्वाभाद्रपदास्वातीतेजस्तत्त्वमितिप्रिये २०३॥

अर्थ—भरणी—कृत्तिका-पुष्य—मघा—पूर्वाफल्गुनी-पूर्वाभाद्रपदा और स्वाती ये सात नक्षत्र तेजतत्व २०३

विशाखोत्तरफल्गुन्यौहस्तचित्रेपुनर्वसु ॥
अश्विनीमृगशीर्षंचवायुतत्त्वमुदाहृतम् ॥२०४॥

अर्थ—विशाखा-उत्तराफल्गुनी-हस्त-चित्रा—पुनर्वसु-अश्विनी और मृगशिर ये सात नक्षत्र वायुतत्व कहेहैं॥

वहन्नाडीस्थितोदूतोयत्पृच्छतिशुभाशुभम् ॥
तत्सर्वंसिद्धिमाप्नोतिशून्येशून्यंनसंशयः॥२०५॥

अर्थ–वहती हुयी नाडीकी तरफ पैठाहुआ जो दूत शुभ वा अशुभ पूछे वह सब सिद्ध होताहै और शून्यमें पूछे तो शून्य होताहै-इसमें संदेह नहीं है ॥ २०५ ॥

पूर्णोऽपिनिर्गमश्वासेसुतत्त्वेऽपिनासिद्धिदः ॥
सूर्यश्चंद्रोथवानॄणांसंग्रहेसर्वसिद्धिदः ॥ २०६ ॥

अर्थ–पूर्णभी सूर्य तत्व अथवा चंद्र तत्व श्वासमें वहता होय तो सिद्धिका दाता नहीं होता यदि दोनों तत्वोंका संग्रह (मेल) होय तो संपूर्ण सिद्धियोंको देताहै.

तत्त्वेरामोजयंप्राप्तःसुतत्त्वेचधनंजयः ॥
कौरवानिहताःसर्वेयुद्धेतत्त्वविपर्ययात् ॥२०७॥

अर्थ–श्रेष्ठ तत्वमें ही रामचंद्र की जय हुयी और श्रेष्ठ तत्वमें ही अर्जुन की–और तत्वोंके विपरीत होनेसे संपूर्ण कौरव युद्धमें मारे गये ॥ २०७ ॥

जन्मांतरीयसंस्कारात्प्रसादादथवागुरोः ॥
केषांचिज्जायतेतत्त्ववासनाविमलात्मनाम् २०८

अर्थ–जन्मांतरके संस्कारसे अथवा गुरुके प्रसादसे किनहीं निर्मल आत्माओंको तत्वोंकी वासना (ज्ञान) होती है ॥ २०८ ॥

लंबीजंधरणींध्यायेच्चतुरस्रांसुपीतभाम् ॥
सुगंधंस्वर्णवर्णाभांप्राप्नुयाद्देहलाघवम् ॥२०९॥

अर्थ-(लं) यह बीज पृथ्वी तत्वमें चतुरस्र (चकोर) सुवर्ण के समान प्रकाशमान पीतवर्ण-सुगंध ध्यान करना-और ध्यानका करनेवाला कांति व देहके लाघवको प्राप्त होताहै ॥ २०९ ॥

वंबीजंवारुणंध्यायेत्तत्त्वमर्द्धशशिप्रभम् ॥
क्षुत्तृष्णादिसहिष्णुत्वंजलमध्येचमज्जनम् २१०॥

अर्थ-(वं) यह बीज जलतत्वमें ध्यान करने योग्य है-और अर्द्धचंद्रके समान इसका आकार है-इसके ध्यान करने वाले को क्षुधा और तृषाकी बाधा नहीं होती और जलमें डूबनेकी सामर्थ्य होती है अर्थात् डूबनेसे दुःख नहीं होता ॥ २१० ॥

रंबीजमग्निजंध्यायेत्त्रिकोणमरुणप्रभम् ॥
बह्वन्नपानभोक्तृत्वमातपाग्निसहिष्णुता ॥२११॥

अर्थ-(रं) यह बीज अग्नि तत्वमें तिकोना-रक्त वर्ण-ध्यान करने योग्यहै इसके ध्यान करने वालेको बहुत अन्नपान भक्षण करनेकी सामर्थ्य होतीहै और धूप और अग्निके वेगको सहसकताहै ॥ २११ ॥

यंबीजंपावनंध्यायेद्वर्तुलंश्यामलप्रभम् ॥
आकाशगमनाद्यंचपक्षिवद्गमनंतथा ॥ २१२ ॥

अर्थ-(यं) यह बीज पवन तत्वमें ध्यान करने योग्य हैं और वर्तुल (गोल) और श्यामरंग होताहैं-इसको ध्यान करनेवाला आकाशमें गमन और पक्षियोंके समान गमन कर सकता है ॥ २१२ ॥

हंबीजंगगनंध्यायेन्निराकारंबहुप्रभम् ॥
ज्ञानंत्रिकालविषयमैश्वर्यमणिमादिकम्॥२१३॥

अर्थ–(हं) यह बीज आकाश तत्वमें ध्यान करने योग्य है जो निराकार और अधिक कांतिवालाहै–इसके ध्यान करनेवालेको त्रिकाल (भूत भविष्यत् वर्तमान) का ज्ञान और अणिमा आदि आठ सिद्धि होतीहैं ॥ २१३ ॥

स्वरज्ञानीनरोयत्रधनंनास्तिततःपरम् ॥
गम्यतेस्वरज्ञानेनह्यनायासंफलंभवेत् ॥ २१४ ॥

अर्थ–जिस स्थानमें स्वरका ज्ञानी हो उससे परे और कोई धन नहींहै–जो मनुष्य स्वरके ज्ञानसे गमन करता है उसको अनायास (विना परिश्रम) सें फल मिलता है ॥ २१४ ॥

श्रीदेव्युवाच ॥ देवदेवमहादेवमहाज्ञानंस्वरो
दयम्॥त्रिकालविषयंचैवकथंभवतिशंकर२१५

अर्थ–पार्वती बोली–कि हे देवताओंके देव महादेव हे शंकर यह महान् (बडा) स्वरोदय का त्रिकाल (भूत भविष्यत् वर्तमान) विषयक ज्ञान किस प्रकार होताहै ॥ २१५ ॥

ईश्वरउवाच ।

अर्थकालजयप्रश्नशुभाशुभमितित्रिधा ॥
एतत्रिकालविज्ञानंनान्यद्भवतिसुंदरि ॥ २१६ ॥

अर्थ—महादेव बोले कि हे सुंदरी—अर्थ (प्रयोजन वा धन) भूत भविष्यत् वर्तमान तीनों कालोंका जय—प्रश्न—शुभ अशुभ (पराजय आदि) का जो तीनों कालोंमें ज्ञान है उसका कारण स्वरोदय है अन्य नहीं॥ २१६॥

तत्त्वेशुभाशुभंकार्यंतत्त्वेजयपराजयौ ॥
तत्त्वेसुभिक्षदुर्भिक्षेतत्त्वंत्रिपदमुच्यते ॥ २१७ ॥

अर्थ—तत्वकेही आधीन शुभ अशुभ कार्य हैं और तत्वके आधीन जय और पराजय हैं—और तत्वोंके ही आधीन सुभिक्ष और दुर्भिक्ष हैं—इस प्रकार तत्वको ही त्रिपद (तीनों कालोंके कार्योंका कर्ता) कहतेहैं॥ २१७॥

श्रीदेव्युवाच ॥ देवदेवमहादेवसर्वसंसारसागरे ॥
किंनराणांपरंमित्रंसर्वकार्यार्थसाधकम् ॥२१८॥

अर्थ—पार्वती बोली कि हे देवताओंके देव—महादेव इस संपूर्ण संसार समुद्रमें मनुष्योंका परम मित्र और मनुष्योंके सब कार्योंका साधक क्या है सो कहो॥ २१८॥

ईश्वरउवाच ॥ प्राणएवपरंमित्रंप्राणएवपरःसखा॥
प्राणतुल्यःपरोबंधुर्नास्तिनास्तिवरानने ॥२१९॥

अर्थ—महादेव बोले कि हे सुंदरमुखी पार्वती प्राण ही परम मित्र है और सखा है प्राणके समान अन्य और बंधु नहीं है नहीं है ॥ २१९ ॥

श्रीदेव्युवाच ।

कथंप्राणस्थितोवायुर्देहःकिंप्राणरूपकः ॥
तत्त्वेषुसंचरन्प्राणोज्ञायतेयोगिभिःकथम् २२०॥

अर्थ—पार्वती बोली कि प्राणमें वायु किस प्रकार स्थित है और क्या देह प्राणरूप है और तत्वोंके विषय विचरते हुये प्राण को योगिजन किस प्रकार जान जाते हैं ॥ २२० ॥

श्रीशिवउवाच ।

कायानगरमध्यस्थोमारुतोरक्षपालकः ॥
प्रवेशे दशभिः प्रोक्तोनिर्गमेद्वादशांगुलः॥२२१॥

अर्थ—शिवजी बोले कि हे पार्वती इस कायारूपी नगरमें टिका हुआ प्राणवायु रक्षपाल (चौकीदार) है— और वह प्राण प्रवेशके समय दश अंगुल और निकसने के समय बारह अंगुलका कहाहै ॥ २२१ ॥

गमनेतुचतुर्विंशन्नेत्रवेदास्तुधावने ॥
मैथुनेपंचषष्टिश्चशयनेचशतांगुलम् ॥ २२२ ॥

अर्थ—और गमन के समय चौवीस २४ अंगुल- का—और धावन (दौड़ना) के समय बियालीस ४२ अंगुलका—और मैथुन के समय पैंसठ ६५ अंगुलका— और सोनेके समयमें सौ १०० अंगुलका कहाहै २२२॥

प्राणस्यतुगतिर्देविस्वभावाद्द्वादशांगुलम् ॥
भोजनेवमनेचैवगतिरष्टादशांगुलम् ॥ २२३ ॥

अर्थ—और हे देवी—प्राण की स्वाभाविक गति बारह १२ अंगुल है और भोजन और वमनके समय प्राणकी गति अठारह १८ अंगुल होजाती है॥ २२३॥

एकांगुलंकृतेन्यूनेप्राणेनिष्कामतामता ॥
आनंदस्तुद्वितीयेस्यात्कविशक्तिस्तृतीयके २२४

अर्थ–यदि प्राणकी गति एक अंगुल कम योगी करले तो निष्कामता की प्राप्ति होती है और दो अंगुल कम करले तो आनंद की प्राप्ति–और तीन अंगुल कम करनेसे कविताकी प्राप्ति होती है ॥ २२४. ॥

वाचासिद्धिश्चतुर्थेचदूरदृष्टिस्तुपंचमे ॥
षष्ठेत्वाकाशगमनंचंडवेगश्चसप्तमे ॥ २२५ ॥

अर्थ–चार अंगुल कम करले तो वाणी की सिद्धि–पांच अंगुल कम करले तो दूर दृष्टि–छः अंगुल कम करले तो आकश गमनमें शक्ति–और सात अंगुल कम करले तो प्रचंड वेग हो जाता है ॥ २२५ ॥

अष्टमेसिद्धयश्चैवनवमेनिधयोनव ॥
दशमेदशमूर्तिश्चछायानैकादशेभवेत् ॥ २२६ ॥

अर्थ–आठ अंगुल कम करले तो अणिमा–आदि सिद्धियोंकी प्राप्ति–नौ अंगुल कम करनेसे नौ निधियों की प्राप्ति–और दश अंगुल कम–करनेसे दशों मूर्तियों (अनेक रूपों) की प्राप्ति–और ग्यारह अंगुल कम होनेसे देहकी छाया का अभाव–प्राप्त होता है २२६ ॥

द्वादशेहंसचारश्चगंगामृतरसंपिबेत् ॥
आनखाग्रंप्राणपूर्णेकस्यभक्ष्यंचभोजनम् २२७॥

अर्थ–बारह अंगुल प्राणकी गति कम हो जाय तो

हंस गति गंगा जलके समान अमृत रस का पान प्राप्त होता है यदि शिखासे लेकर नख पर्यंत प्राणों को पूर्ण योगी करले तो भक्ष्य और—भोजन किसको अर्थात् भक्ष्य भोजन निवृत्ति हो जाती है ॥ २२७ ॥

एवंप्राणविधिःप्रोक्तःसर्वकार्यफलप्रदः ॥
जायतेगुरुवाक्येननविद्याशास्त्रकोटिभिः २२८॥

अर्थ—इस प्रकार संपूर्ण कार्यों के फल देने वाली प्राण की विधि कही है और जिसका ज्ञान गुरुके वाक्यसे होता है—विद्या और कोटि भी ग्रंथोंसे नहीं होता ॥ २२८ ॥

प्रातश्चंद्रोरविःसायंयदिदैवान्नलभ्यते ॥
मध्याह्नान्मध्यरात्राच्चपरतस्तुप्रवर्त्तते ॥ २२९ ॥

अर्थ—यदि प्रातःकाल चन्द्रस्वर और सायंकाल को सूर्य स्वर दैववश न मिलैं तो मध्याह्न अथवा आधी रात्रिसे परे प्रवृत्त होतेहैं अर्थात् मिलते हैं २२९

दूरयुद्धेजयीचंद्रःसमासन्नेदिवाकरः ॥
वहंन्नाड्यागतः पादःसर्वसिद्धिप्रदायकः ॥ २३० ॥

अर्थ—यदि दूर देशमें युद्ध कर्तव्य होय तो चंद्रमाका स्वर जयकारी होताहै और समीपके युद्धमें सूर्यका स्वर जयकारी होताहै यदि वहती हुयी नाडी के समय गमन कालमें पैर रक्खा जाय तो सब सिद्धियोंको देताहै ॥ २३० ॥

यात्रारंभेविवाहेचप्रवेशेनगरादिके ॥
शुभकार्याणिसिध्यंतिचंद्रचारेषुसर्वदा ॥ २३१ ॥

अर्थ—यात्राके आरंभमें—विवाह गृह वा नगर प्रवेश आदि संपूर्ण शुभ कर्म चंद्रस्वरके चार में सदैव सिद्ध होते हैं ॥ २३१ ॥

अयनतिथिदिनेशैःस्वीयतत्त्वेचयुक्ते
यदिवहतिकदाचिद्दैवयोगेनपुंसाम् ॥
सजयतिरिपुसैन्यंस्तंभमात्रस्वरेण
प्रभवतिनचविघ्नंकेशवस्यापिलोके ॥ २३२ ॥

अर्थ—अयन—तिथि—वार इनके स्वामियोंसे युक्त पुरुषोंमें अपना स्वर वा तत्व दैवयोगसे वहै तो वह पुरुष शत्रुकी सेनाको स्वरके स्तंभ (रोकना) मात्रसे ही जीतता है—और वैकुंठ लोकमें भी उसको विघ्न नहीं होता ॥ २३२ ॥

जीवंरक्षजीवंरक्षजीवाङ्गेपरिधायच ॥
जीवोजपतियोयुद्धेजीवञ्जयतिमेदिनीम्॥२३३॥

अर्थ—जीव (अपने) अंगपर वस्त्रोंको पहिरकर जो जीव (जीवंरक्ष जीवंरक्ष) युद्धमें ऐसे जपताहै वह पुरुष जीवताहुआ संपूर्ण पृथ्वीको जीतताहै ॥ २३३ ॥

भूमौजलेचकर्त्तव्यंगमनंशांतिकर्मसु ॥
वह्नौवायौप्रदीप्तेषुखेपुनर्नोभयेष्वपि ॥ २३४ ॥

अर्थ—शांतिके कर्मोंमें पृथ्वी या जलतत्वमें गमन-

करै—और प्रदीप्त (उग्र) कर्मोंमें अग्नि और वायुतत्वमें गमनकरै—और आकाशतत्वमें पूर्वोक्त दोनों प्रकारके कर्मोंमें गमन नकरै ॥ २३४ ॥

जीवेनशस्त्रंबध्नीयाज्जीवेनैवविकाशयेत् ॥
जीवेनप्रक्षिपेच्छस्त्रंयुद्धेजयतिसर्वदा ॥ २३५ ॥

अर्थ—जीव स्वरमें शस्त्रको बांधे अर्थात् जिस तरफका स्वरचलै उसीहाथसे शस्त्रको धारणकरै और जीवस्वरसेही शस्त्रको खोले—और जीवस्वरमेंही शस्त्रको जो फैंके वह मनुष्य युद्धमें सदैव जयको प्राप्तहोताहै २३५

आकृष्यप्राणपवनंसमारोहेतवाहनम् ॥
समुत्तरेपदंदद्यात्सर्वकार्याणिसाधयेत् ॥ २३६ ॥

अर्थ—जो मनुष्य प्राण वायुको खींच कर अश्व आदि सवारीपर चढे—और पवनके उतारपर घोड़े की रकावमें पैर रक्खे वह संपूर्ण कार्योंको सिद्ध करैगा ॥ २३६ ॥

अपूर्णेशत्रुसामग्रीपूर्णेवास्वबलंतथा ॥
कुरुतेपूर्णतत्त्वस्थोजयत्येकोवसुंधराम् ॥२३७॥

अर्थ—यदि अपूर्ण स्वरमें शत्रुकी सामग्री—और संपूर्ण स्वरमें अपनी सामग्रीका बल होय तो पूर्ण तत्वमें इस प्रकार टिकाहुआ पुरुष अकेलाभी पृथ्वीको जीतताहै ॥ २३७ ॥

यानाडीवहतेचांगेतस्यामेवाधिदेवता ॥
सन्मुखेऽपिदिशातेषांसर्वकार्यफलप्रदा ॥२३८॥

अर्थ—अपने अंगमें जो नाडी (स्वर) वहती हो और उसी नाडीमें उस नाडीका देवता और उनकी दिशा सन्मुख होय तो सब कार्योंका फल देतीहै ॥ २३८ ॥

आदौतुक्रियतेमुद्रापश्चाद्युद्धंसमाचरेत् ॥
सर्पमुद्राकृतायेनतस्यसिद्धिर्नसंशयः ॥ ३९ ॥

अर्थ—मनुष्य पहिले मुद्राको करै और पश्चात् युद्ध करै जो मनुष्य सर्प मुद्रा करता है उसकी सिद्धि होतीहै इसमें संशय नहींहै ॥ २३९ ॥

चंद्रप्रवाहेप्यथसूर्यवाहेभटाःसमायांतिचयो
द्धुकामाः ॥ समीरणस्तत्त्वविदांप्रतीतोया
शून्यतासाप्रतिकार्यनाशम् ॥ २४० ॥

अर्थ—चंद्र स्वरके अथवा सूर्य स्वरके चलनेके समय यदि समीरण (जल तत्त्व) वहता हो और तत्वके ज्ञाताओंको वहताहुआ प्रतीत होजाय तो युद्ध करनेके लिये भट (योद्धा) भली प्रकार आवेंगे—और यदि शून्यता हो अर्थात् वायु वा आकाश तत्त्व वहते होय तो कार्यका नाश होताहै ॥ २४० ॥

यांदिशंवहतेवायुर्युद्धंतद्दिशिदापयेत् ॥
जयत्येवनसंदेहःशक्रोऽपियदिचाग्रतः ॥ ४१ ॥

अर्थ—जिस दिशाका पवन तत्त्व चलता हो उसी दिशामें युद्धके लिये सेनाको भेजे तो चाहे आगे इंद्रभी होतो भी जय होगी इसमें संदेह नहींहै ॥ २४१ ॥

यत्रनाड्यांवहेद्वायुस्तदंगेप्राणमेवच ॥
आकृष्यगच्छेत्कर्णांतंजयत्येवपुरंदरम् ॥२४२॥

अर्थ—जिस नाडीका पवन तत्त्व वहता हो उसी नाडी के पवनको कर्ण पर्यंत आकर्षण (खींच) करके गमन करै तौ पुरंदर (इंद्र) कोभी जीतसकता है ॥ २४२ ॥

प्रतिपक्षप्रहारेभ्यःपूर्णांगंयोभिरक्षति ॥
नतस्यारिपुभिःशक्तिर्बलिष्ठैरपिहन्यते ॥ २४३ ॥

अर्थ—जो योद्धा प्रतिपक्ष (शत्रु) के प्रहारोंसे अपने संपूर्ण अंगोंकी रक्षा करताहै उस योद्धा की शक्ति को बलवान् शत्रुभी नष्ट नहीं कर सकते ॥ २४३ ॥

अंगुष्ठतर्जनीवंशेपादांगुष्ठेतथाध्वनिः ॥
युद्धकालेचकर्त्तव्योलक्षयोद्धाजयीभवेत् २४४॥

अर्थ—अँगूठा और तर्जनी अंगुलि इनके वंशमें और चरणके अँगूठेमें युद्धके समय जो ध्वनि शब्द करै तो लक्ष योद्धाओंको जीतसकताहै ॥ २४४ ॥

निशाकरेरवौचारेमध्येयस्यसमीरणः ॥
स्थितोरक्षेद्दिगंतानिजयकांक्षीगतःसदा ॥२४५॥

अर्थ—चंद्रमा वा सूर्यके प्रवाह में यदि वायु तत्व वहे तो उस समय गमन करनेवाला दिगंतों की रक्षा करताहै और सदैव जय को पाताहै ॥ २४५ ॥

श्वासप्रवेशकालेतुदूतोजल्पतिवांछितम् ॥
तस्यार्थःसिद्धिमायातिनिर्गमेनैवसुंदरि ॥२४६॥

अर्थ-जिस मनुष्यके श्वासके प्रवेश समयमें दूत अपने मुखसे वांछित बातको कहै तो हे सुंदरी गमन करते ही उस मनुष्यका अर्थ सिद्ध होताहै ॥ २४६ ॥

लाभादीन्यपिकार्याणिपृष्टानिकीर्तितानिच ॥
जीवेविशंतिसिद्ध्यंतिहानिर्निःसरणेभवेत्॥२४७

अर्थ-पूछे और कहे हुये लाभ आदि संपूर्ण कार्य जीव नाडीके प्रवेश समयमें सिद्ध होतेहैं और निकसनेके समयमें नष्ट होतेहैं ॥ २४७ ॥

नरेदक्षास्वकीयाचस्त्रियांवामाप्रशस्यते ॥
कुंभकोयुद्धकालेचतिस्रोनाड्यस्त्रयीगतिः २४८॥

अर्थ-पुरुषों की अपनी दक्षिण नाडी और स्त्रियों की वाम नाडी और युद्धके समयमें कुंभक नाडी श्रेष्ठ होती है-इस प्रकार तीन नाडीहैं और तीनही उनकी गतिहैं ॥ २४८ ॥

हकारस्यसकारस्यविनाभेदंस्वरःकथम् ॥
सोहंहंसपदेनैवजीवोजयतिसर्वदा ॥ २४९ ॥

अर्थ-हकार और सकारके भेद विना स्वरज्ञान कैसे हो सकता है-इससे जीव सोहं और हंस इन दो पदोंसे ही सर्वदा जय को प्राप्त होता है ॥ २४९ ॥

शून्यांगंपूरितंकृत्वाजीवांगंगोपयेज्जयम् ॥
जीवांगेघातमाप्नोतिशून्यांगंरक्षतेसदा ॥ २५० ॥

अर्थ-शून्य अंगको पूर्ण करके जीवांगकी रक्षा

करनेसे जय प्राप्त होतीहै-क्योंकि जीवांगमें घात (नाश) को प्राप्त होताहै और शून्यांग सदैव रक्षा करता है ॥ २५० ॥

वामेवायदिवादक्षेयदिपृच्छतिपृच्छकः ॥
पूर्णेघातोनजायेतशून्येघातंविनिर्दिशेत् ॥२५१॥

अर्थ-यदि प्रश्नका कर्ता वाम वा दक्षिण की तरफ बैठाहुआ युद्धका प्रश्न करे और उस समय पूर्ण स्वर होय तो नाश न होगा-और शून्य होय तो घात होगा यह कहै ॥ २५१ ॥

भूतत्त्वेनोदरेघातःपदस्थानेऽम्बुनाभवेत् ॥
उरुस्थानेऽग्नितत्त्वेनकरस्थानेचवायुना ॥२५२॥

अर्थ-प्रश्न के समय पृथ्वी तत्व होय तो उदरमें-जल तत्व होय तो पैरोंमें-अग्नि तत्व होय तो जंघाओंमें और वायु तत्व होय तो हाथोंमें-घात होगा अर्थात् शस्त्र लगेगा ॥ २५२ ॥

शिरसिव्योमतत्त्वेचज्ञातव्योघातनिर्णयः ॥
एवंपंचविधोघातःस्वरशास्त्रेप्रकाशिताः ॥२५३॥

अर्थ-यदि आकाश तत्व वहता होय तो शिरमें घावका निर्णय जानना इस प्रकार स्वर शास्त्रमें पांच प्रकारका घाव प्रकाशित कियाहै ॥ २५३ ॥

युद्धकालेयदाचंद्रःस्थायी जयति निश्चितम् ॥
यदासूर्यप्रवाहस्तुयायीविजयतेतदा ॥ २५४ ॥

अर्थ–जब युद्धके समयमें चंद्रमाका स्वर चलता हो तो स्थायी(जिसपर चढाई की जाय)की निश्चयसे जय होयगी और जो सूर्यके स्वरका प्रवाह होय तो यायी (चढनेवाले) की जयहोय ॥ २५४ ॥

जयमध्येतुसंदेहेनाडीमध्यंतुलक्षयेत् ॥
सुषुम्नायांगतेप्राणेसमरेशत्रुसंकटम् ॥ २८८ ॥

अर्थ–जो जयके मध्यमें संदेह होय तो नाडीके मध्यको देखे यदि प्राणवायु सुषुम्ना नाडीमें चलता होय तो संग्राममें शत्रुको संकट हो ॥ २५५ ॥

यस्यानाड्याभवेच्चारस्तांदिशंयुधिसंश्रयेत् ॥
तदाऽसौजयमाप्नोति नात्रकार्या विचारणा २८६

अर्थ–जिस नाडीका चार (चलना) होय युद्धके समयमें उसीदिशामें खडा होय अर्थात् चंद्र नाडीमें पूर्व अथवा उत्तरमें सूर्यनाडीमें दक्षिण अथवा पश्चिममें इस प्रकार वह युद्ध करनेवाला जयको प्राप्त होता है इसमें कुछ विचार नहीं करना ॥ २५६ ॥

यदिसंग्रामकालेतुवामनाडीयदावहेत् ॥
स्थायिनोविजयंविद्याद्रिपुवश्योदयोऽपिच २८७

अर्थ–यदि संग्रामके समय वामनाडी बहती होय तो स्थायीका विजय जाने और शत्रुके वसमें यायीका होना समझे ॥ २५७ ॥

यदिसंग्रामकालेतुसूर्यस्तुव्यावृतोवहेत् ॥

तदायायिजयंविद्यात्सदेवासुरमानवे ॥२५८॥

अर्थ—जो संग्रामके समय सूर्यका स्वर लगा तार वहता होय तो उससमय देवता राक्षस मनुष्यके युद्धमें यायीके जयको जानना ॥ २५८ ॥

रणेहरतिशत्रुस्तं वामायांप्रविशेन्नरः ॥
स्थानंविषुवचारेणजयःसूर्येणधावता ॥ २५९ ॥

अर्थ—जो मनुष्य वामनाडीके प्रचारमें युद्धमें प्रवेश करताहै उसको संग्राममें शत्रु हरलेतेहैं और सुषुम्ना नाडीके वहते जो गमन करै उसको स्थान मिलताहै अर्थात् युद्ध नहीं होता सूर्य स्वरके वहते गमन करे तो जयको प्राप्त होताहै ॥ २५९ ॥

युद्धद्वयेकृतेप्रश्नेपूर्णस्यप्रथमेजयः ॥
रिक्तेचैवद्वितीयस्तुजयीभवतिनान्यथा ॥२६०॥

अर्थ—यदि एक समय युद्ध विषयकप्रश्न दो होय तो उस समय पूर्ण स्वर वहता होय तो प्रथमका जय और रिक्तस्वर वहता होयतो दूसरेका जय अन्यथा नहीं २६०

पूर्णनाडीगतःपृष्ठेशून्यांगंचतदाग्रतः ॥
शून्यस्थानेकृतःशत्रुर्म्रियतेनात्रसंशयः ॥२६१॥

अर्थ—यदि पूर्ण नाडीमें गया होय तो शत्रु पीठपर आवे अर्थात् शत्रु पीठ दे कर भाग जाय शून्य नाडीका अंग होय तो शत्रु आगे आवै और शून्य स्थानमें किया हुआ शत्रु मरणको प्राप्त होताहै इसमें संशय नहीं २६१

वामचारेसमंनामयस्यंतस्यजयोभवेत् ॥
पृच्छकोदक्षिणेभागेविजयीविषमाक्षरः ॥२६२॥

अर्थ—यदि कोई वाम भागमें बैठ कर प्रश्न करै तौ उसके प्रश्नके वा जिस वातको पूछे उसकें समाक्षर होय तो उसका जय और विषम अक्षरवालेका पराजय होताहै यदि—दक्षिण भागमें बैठ कर प्रश्न करै तो विपम अक्षरवालेका जय और सम अक्षरवालेका पराजय होय ॥ २६२ ॥

यदापृच्छतिचंद्रस्यतदासंधानमादिशेत् ॥
पृच्छेद्यदातुसूर्यस्यतदाजानीहिविग्रहम्॥२६३॥

अर्थ—यदि पूछने के समयमें चंद्रमाका स्वर चलै तो संधि (मिलाफ) को कहै यदि सूर्यके स्वरमें प्रश्न करै तो उस समय विग्रह (लडाई) को जाने॥ २६३ ॥

पार्थिवेचसमंयुद्धंसिद्धिर्भवतिवारुणे ॥
युद्धेहितेजसोभंगोमृत्युर्वायौनभस्यपि ॥२६४॥

अर्थ—यदि पृथ्वी तत्वमें युद्धका आरंभ होय तो युद्धमें वरावरी जलके तत्वमें जयकी प्राप्ति तेजके तत्वमें भंग (नाश) वायु और आकाश तत्वमें मृत्यु होताहै ॥ २६४ ॥

निमित्तकप्रमादाद्वायदानज्ञायतेऽनिलः ॥
पृच्छाकालेतदाकुर्यादिदंयत्नेनबुद्धिमान् २६५॥

अर्थ—यदि किसी निमित्तसे अथवा प्रमादसे प्रश्नके

समयमें दक्षिण या उत्तर स्वरका ज्ञान न होय तब बुद्धिमान् मनुष्य यत्नसे यह करै कि ॥ २६५ ॥

निश्चलांधारणांकृत्वापुष्पंहस्तान्निपातयेत् ॥
पूर्णांगेपुष्पपतनंशून्यंवातत्परंभवेत् ॥२६६॥

अर्थ—निश्चल धारणा करिके अपने हाथसे पुष्पको पृथ्वीपर गैरे—जो अपने अग्रभागमें पुष्प पडे तो पूर्ण फल और दूर पडे तो शून्य फल जानना ॥ २६६ ॥

तिष्ठन्नुपविशन्नापिप्राणमाकर्षयन्निजम् ॥
मनोभंगमकुर्वाणःसर्वकार्येषुजीवति ॥ २६७ ॥

अर्थ—जो मनुष्य खडा होता और बैठताहुआ अपनी प्राण वायुको निश्चल मनसे शरीरके भीतर आकर्षण (खींचना) करताहै वह सबकार्योंकी जीवताहै अर्थात् उसके सब कार्य सिद्ध होतेहैं ॥ २६७ ॥

नकालोविविधंघोरंनशस्त्रंनचपन्नगाः ॥
नशत्रुव्याधिचोराद्याःशून्यस्थानाशितुंक्षमाः ॥

अर्थ—काल और अनेक प्रकारके भयानक शस्त्र, सर्प, शत्रु,व्याधि और चोर आदि शून्य स्थानमें टिकेहुये ये सब मनुष्यको नाश करनेको समर्थ नहीं होते २६८

जीवेनस्थापयेद्वायुंजीवेनारंभयेत्पुनः ॥
जीवेनक्रीडतेनित्यंद्यूतेजयतिसर्वथा ॥ २६९ ॥

अर्थ—जीव स्वरसे वायुको स्थिर करै फिर जीवसे ही वायुका आरंभ करै और जीवसे ही द्यूत क्रीडाका

आरंभ करै तो यूतमें सर्वथा जय होतीहै ॥ २६९ ॥

स्वरज्ञानिबलादग्रेनिष्फलंकोटिधाभवेत् ॥
इहलोकेपरत्रापिस्वरज्ञानीबलीसदा ॥ २७० ॥

अर्थ—स्वर ज्ञानीके बलके आगे कोटि प्रकारके भी बल निष्फल होतेहैं क्योंकि स्वरका ज्ञानी इस लोकमें और परलोकमें सदैव बलवान् होताहै ॥ २७० ॥

दशशतायुतंलक्षंदेशाधिपबलंक्वचित् ॥
शतक्रतुसुरेंद्राणांबलंकोटिगुणंभवेत् ॥२७१॥

अर्थ—किसी मनुष्यको दश, किसीको शत, किसीको दश सहस्र, किसीको लक्ष, किसीको देशके राज्यका बल होताहै—इन्द्र और ब्रह्मा आदि देवताओंको उनसे कोटिगुना बल होताहै इसी प्रकार स्वरका बल सब बलोंसे कोटिगुनाहै ॥ २७१ ॥

देव्युवाच॥ परस्परंमनुष्याणांयुद्धेप्रोक्तोजयस्त्वया ॥ यमयुद्धेसमुत्पन्नेमनुष्याणांकथंजयः ॥

अर्थ—पार्वती बोली कि मनुष्योंके परस्पर युद्धमें जयकी प्राप्ति आपने कही जब यमराजके संग युद्ध होय तब मनुष्यका किस प्रकार जय होवे ॥ २७२ ॥

ईश्वरउवाच ॥ ध्यायेद्देवंस्थिरोजीवंजुहुयाज्जीवसंगमे ॥ इष्टसिद्धिर्भवेत्तस्यमहालाभोजयस्तथा ॥

अर्थ—महादेव बोले कि हे पार्वती जो मनुष्य स्थिर हो कर देवताओंका ध्यान करै और जीव संगम (कुम्भ-

क) प्राणवायुमें जीवका होम करे उस मनुष्यके इष्टकी सिद्धि महालाभ और जय प्राप्त होगा ॥ २७३ ॥

निराकाशात्समुत्पन्नंसाकारंसकलंजगत् ॥
तत्साकारंनिराकारंज्ञानेभवतितत्क्षणात् २७४॥

अर्थ—निराकार परमेश्वरसे आकारवाला सब जगत् उत्पन्न हुआहै निराकार परमेश्वरके ज्ञानसे वह जगत् साकार (आकारवाला) उसी क्षणमें हो जाताहै २७४

श्रीदेव्युवाच ॥ नरयुद्धंयमयुद्धंत्वयाप्रोक्तंमहेश्वर ॥ इदानींदेवदेवानांवशीकरणकंवद॥२७५॥

अर्थ—पार्वती बोली कि हे महेश्वर मनुष्य और यमराज का युद्ध आपने वर्णन किया अब देवताओंके देवोंका वशमें करना कहो ॥ २७५ ॥

ईश्वरउवाच ॥ चंद्रंसूर्येणचाकृष्यस्थापयेज्जीवमंडले ॥ आजन्मवशगारामाकथितेयंतपोधनैः॥

अर्थ—महादेव बोले कि स्त्रीके चंद्र स्वरको अपने सूर्य स्वरसे आकर्षण करके अपने जीव स्वरको मंडलमें टिकावे तो स्त्री जन्मभर अपने वशमें होती है यह तपस्वियोंने कहाहै यह क्रिया अपनी विवाही स्त्रीमें ही हो सकतीहै ॥ २७६ ॥

जीवेनगृह्यतेजीवोजीवोजीवस्यदीयते ॥
जीवस्थानेगतोजीवोबालाजीवांतकारकः२७७॥

अर्थ—पुरुष अपने जीव स्वरसे स्त्रीके जीव स्वरको ग्रहण करै और स्त्रीके जीव स्वरमें अपना जीवस्वर दे इस प्रकार जीवके स्थानमें गयाहुआ जीव जिसका ऐसा पुरुष जन्मभरतक स्त्रीके वशमें रहताहै ॥ २७७ ॥

रात्र्यंतयामवेलायांप्रसुप्तेकामिनीजने ॥
ब्रह्मजीवंपिबेद्यस्तुबालाप्राणहरोनरः ॥ २७८ ॥

अर्थ—रात्रिके पिछले पहरके समय जिस समय जो मनुष्य ब्रह्म जीव (सुषुम्ना स्वर)को पीताहै वह मनुष्य स्त्रियोंके प्राणोंको वसमें करताहै ॥ २७८ ॥

अष्टाक्षरंजपित्वातुतस्मिन्कालेगतेसति ॥
तत्क्षणं दीयतेचंद्रोमोहमायातिकामिनी २७९॥

अर्थ—उस कालके व्यतीत होने पर अष्टाक्षरमंत्रको जपकर जो पुरुष अपना चंद्र स्वर स्त्रीको देताहै तो वह कामिनी उसी क्षणमें मोहको प्राप्त होतीहै ॥ २७९ ॥

शयनेवाप्रसंगेवायुवत्यालिंगनेऽपिवा ॥
यःसूर्येणपिबेच्चंद्रंसभवेन्मकरध्वजः ॥ २८० ॥

अर्थ—शयनके समय वा स्त्रीके संगमें अथवा स्पर्शके समय जो मनुष्य अपने सूर्य स्वरसे स्त्रीके चंद्र स्वरको पीताहै वह मनुष्य कामदेवके समान मोह करनेवाला होताहै ॥ २८० ॥

शिवआलिंग्यतेशक्त्याप्रसंगेदक्षिणेऽपिवा
तत्क्षणाद्दापयेद्यस्तुमोहयेत्कामिनीशतम् २८१॥

अर्थ—यदि शिव स्वर (सूर्य) शक्ति स्वरसे (चंद्र) स्त्री संगके समय मिल जाय अथवा पुरुष अपना चंद्रस्वर स्त्रीको वह पुरुष सौकामिनीयोंको मोह सकताहै २८१ ॥

सप्तनवत्रयःपंचवारान्संगस्तुसूर्यभे ॥
चंद्रेद्वितुर्यषट्कृत्वावश्याभवतिकामिनी॥२८२॥

अर्थ—स्त्रीके चंद्र स्वरको अपने सूर्य स्वरमें देनेके अनंतर सात ७ नव ९ तीन ३ वा पांच ५ वार संगहो जाय अथवा स्त्रीके चंद्र स्वरमें अपना सूर्य स्वर कर दो२ चार ४ वाछः ६ वार मिल जाय तो वह कामिनी वशमें होतीहै ॥ २८२ ॥

सूर्यचंद्रौसमाकृष्यसर्पाक्रांत्याधरोष्ठयोः ॥
महापद्ममुखंस्पृष्ट्वाकारंवारमिदंचरेत् ॥ २८३ ॥

अर्थ—अपने सूर्य और चंद्र स्वरको सर्पकी गतिसे खींच कर अधरोष्ठों पर स्त्रीके मुखसे अपना मुख स्पर्श करके वारंवार पूर्वोक्त प्रकारसे चंद्र और सूर्यका मेल करै

आप्राणमितिपद्मस्ययावन्निद्रावशंगता ॥
पश्चाज्जागर्तिवेलायांचोष्यतेगलचक्षुषी ॥२८४॥

अर्थ—जितने स्त्री निद्राके वशमें रहै तबतक पूर्वोक्त-प्रकारसे स्त्रीके मुखपद्मका पान करै पीछे जागनेके समय गला व नेत्र इनका चुंबन करै ॥ २८४ ॥

अनेनविधिनाकामीवशयेत्सर्वकामिनीः ॥
इदंनवाच्यमन्यस्मिन्नित्याज्ञापारमेश्वरी ॥२८५॥

अर्थ–इस विधिसे कामी पुरुष सब कामिनीयोंको वशमें करताहै परंतु मेरी यह सच्ची आज्ञाहै कि यह वशीकरण किसी अन्य पुरुषको अर्थात् लंपटकोनकहै२८५

इति वशीकरणम् ।

अथगर्भप्रकरणम् ।

ऋतुकालभवानारीपंचमेऽह्नियदाभवेत् ॥
सूर्याचंद्रमसोर्योगेसेवनात्पुत्रसंभवः ॥ २८६ ॥

अर्थ–ऋतुस्नानके अनंतर जब स्त्रीको पांचवां दिन होय उस समय पुरुषका सूर्य स्वर स्त्रीका चंद्र स्वर चलता होय तो उस समय स्त्रीके संग करनेसे पुत्रका जन्म होताहै ॥ २८६ ॥

शंखवल्लीगवांदुग्धेपृथ्व्यापोवहतेयदा ॥
भर्त्तुरेववदेद्वाक्यंदर्पंदेहित्रिभिर्वचः ॥ २८७ ॥

अर्थ–जिस समय पृथ्वी और जल तत्त्व वहते होय उस समय स्त्रीको गौके दूधमें शंखवल्लीको खिलावे फिर स्त्री अपने भर्तासे तीन वार भोगकी प्रार्थना करै ॥-

ऋतुस्नातापिबेन्नारीऋतुदानंतुयोजयेत् ॥
रूपलावण्यसंपन्नोनरसिंहःप्रसूयते ॥२८८॥

अर्थ–जब स्त्री ऋतुस्नानके अनंतर उक्त औषधको पीले तब पुरुष ऋतुदानदे अर्थात् भोग करे तो रूप– और पराक्रमी–सुंदर नरोंमें सिंह पैदा होताहै॥ २८८॥

सुषुम्नासूर्यवाहेनऋतुदानंतुयोजयेत् ॥
अंगहीनःपुमान्यस्तुजायतेत्रासविग्रहः ॥२८९॥

अर्थ—जो मनुष्य सूर्य स्वरके प्रवाहके संग सुषुम्ना स्वरके वहनेके समय ऋतु दान देताहै उसकेअंगहीन और कुरूप पुत्र पैदा होताहै ॥ २८९ ॥

विषमांकेदिवारात्रौविषमांकेदिनाधिपः ॥
चंद्रनेत्राग्नितत्त्वेषुवंध्यापुत्रमवाप्नुयात् ॥ २९०॥

अर्थ—ऋतुके अनंतर विषम दिनोंमें पुरुषका सूर्यस्वर दिन वा रातिमें चले अर्थात् स्त्रीका चंद्र स्वर चले और पृथ्वी—जल—अग्नी—इन तत्वोंमें गर्भाधान होय तो वंध्याभी पुत्रको प्राप्त होतीहै ॥ २९० ॥

ऋत्वारंभेरविःपुंसांस्त्रीणांचैवसुधाकरः ॥
उभयोःसंगमेप्राप्तेवंध्यापुत्रमवाप्नुयात् ॥२९१॥

अर्थ—यदि ऋतुके आरंभमें पुरुषोंका सूर्य स्वर और स्त्रीका चंद्रस्वर चले और दोनोंका संगम होजाय तो वंध्याभी पुत्रको प्राप्त होजाय ॥ २९१ ॥

ऋत्वारंभेरविःपुंसांशुक्रांतेचसुधाकरः ॥
अनेनक्रमयोगेननादत्तेदैवदारुकम् ॥२९२॥

अर्थ—यदि भोगके आरंभ पुरुषका सूर्यस्वर चले और वीर्यपातके अनंतर चंद्रस्वर वहने लगे तो इसक्रम-योगसे स्त्री गर्भ धारण नहीं करती ॥ २९२॥

चंद्रनाडीयदाप्रश्नेगर्भेकन्यातदाभवेत् ॥

सूर्योभवेत्तदापुत्रोद्वयोगर्भोविहन्यते ॥ २९३ ॥

अर्थ—यदि गर्भवतीके प्रश्नके समयमें चंद्रमाकी नाडी चले तौ गर्भमें कन्या होतीहै और सूर्यस्वर चले तो पुत्र और दोनों स्वर चलें तो गर्भ नष्ट होजाताहै ॥ २९३ ॥

पृथ्वीपुत्रीजलेपुत्रःकन्यकातुप्रभंजने ॥
तेजसिगर्भपातःस्यान्नभस्यपिनपुंसकः ॥२९४॥

अर्थ—प्रश्नके समयमें पृथ्वी तत्व होय तो कन्या जल तत्व होय तो पुत्र वायुतत्व होय तो कन्या तेजतत्व होय तो गर्भका पात आकाश तत्व होय तो नपुंसक होताहै ॥ २९४ ॥

चंद्रेस्त्रीपुरुषःसूर्योमध्यमार्गेनपुंसकः ॥
गर्भप्रश्नेयदादूतःपूर्णेपुत्रःप्रजायते ॥ २९५ ॥

अर्थ—गर्भके प्रश्न समय चंद्र स्वर होय तो कन्या सूर्यस्वर होय तो पुत्र सुषुम्नाका स्वर होय तो नपुंसक होताहै यदि पूछनेवाले दूतके पूर्ण अंग होय तो पुत्र पैदा होताहै ॥ २९५ ॥

शून्येशून्यंयुगेयुग्मंगर्भपातश्चसंक्रमे ॥
तत्त्ववित्सविजानीयात्कथितंतत्तुसुंदरि ॥२९६॥

अर्थ—हे सुंदरी पूछनेवालेके अंग शून्य होय तो शून्य दो २ स्वर चले होय तो युग्म (दो) यदि स्वरोंका संक्रम या सुषुम्ना होय तो गर्भका पात तत्वोंके वेत्ता जाने ॥ २९६ ॥

गर्भाधानंमारुतेस्याद्दुःखीदिक्षुख्यातोवारुणे
सौख्ययुक्तः ॥ गर्भस्रावःस्वल्पजीवश्चवह्नौभो
गीभव्यःपार्थिवेनार्थयुक्तः ॥ २९७ ॥

अर्थ–वायु तत्वमें गर्भाधान होय तो दुःखवाला और जलतत्वमें गर्भाधान होय तो दिशाओंमें विख्यात और सुखी, अग्नितत्वमें होय तो गर्भका पात अथवा अल्पजीवी पृथ्वी तत्वमें होय तो भोगी–सुंदर–धनवान–पुत्र पैदा होताहै ॥ २९७ ॥

धनवान्सौख्ययुक्तश्चभोगवानर्थसंस्थितिः ॥
स्यान्नित्यंवारुणेतत्त्वेव्योम्निगर्भोविनश्यति२९८

अर्थ–जल तत्वमें गर्भाधान होय तो धनवान् सुखी भोगवान् जिसके पास नित्यधन रहै ऐसा पुत्र पैदा होताहै आकाश तत्वमें गर्भाधान होय तो गर्भ नष्ट हो जाताहै ॥ २९८ ॥

माहेंद्रेसुसुतोत्पत्तिर्वारुणेदुहिताभवेत् ॥
शेषेषुगर्भहानिःस्याज्जातमात्रस्यवामृतिः २९९॥

अर्थ–पृथ्वी तत्वमें गर्भाधान होय तो पुत्रकी और जल तत्वमें रहै तो कन्याकी उत्पत्ति होतीहै और शेष तत्वमें रहै तो गर्भकी हानि वा पैदा होतेहीका मरण होताहै ॥ २९९ ॥

रविमध्यगतश्चंद्रश्चंद्रमध्यगतोरविः ॥
ज्ञातव्यंगुरुतःशीघ्रंनवेदशास्त्रकोटिभिः ॥३००॥

अर्थ-सूर्य स्वरके मध्यमें चंद्रस्वरकी और चंद्र स्वरके मध्यमें सूर्य स्वरकी गति गुरुसे शीघ्र जाने यह बात वेद और कोटि शास्त्रोंसे नहीं आती ॥ ३०० ॥

इति गर्भप्रकरणम्।

अथसंवत्सरफलम्।

चैत्रशुक्लप्रतिपदिप्रातस्तत्त्वविभेदतः ॥
पश्येद्विचक्षणोयोगीदक्षिणेचोत्तरायणे ॥३०१॥

अर्थ-चैत्रके शुक्लपक्षकी प्रतिपदाको प्रातःकालके समय तत्वोंके विभेदसे विचक्षण (पंडित) योगी दक्षिणायन और उत्तरायण देखे-अर्थात् उस दिनके तत्वोंके बहनेसे वर्षभरके फलको देखे ॥ ३०१ ॥

चंद्रोदयस्यवेलायांवहमानोऽथतत्त्वतः ॥
पृथिव्यापस्तथावायुःसुभिक्षंसर्वसस्यजम् ३०२

अर्थ-चंद्रस्वरके उदयके समय यदि पृथ्वी जल वा वायुतत्व चले तो सब खेतियोंका सुभिक्ष होताहै ३०२

तेजोव्योम्नोर्भयंघोरंदुर्भिक्षंकालतत्त्वतः ॥
एवंतत्त्वफलंज्ञेयंवर्षमासेदिनेष्वपि ॥ ३०३ ॥

अर्थ-यदि चंद्रस्वरमें तेज और आकाशतत्व चलते होंय तो घोरभय और दुर्भिक्ष होताहै इसी प्रकार समयके तत्वानुसार वर्ष मास और दिनोंमेंभी संपूर्णतत्वोंका फल जानना ॥ ३०३ ॥

मध्यमाभवतिक्रूरादुष्टासर्वेषुकर्मसु ॥
देशभंगमहारोगक्लेशकष्टादिदुःखदा ॥ ३०४ ॥

अर्थ—मध्यमा (सुषुम्ना) नाडी क्रूर और सब-कर्मोंमें दुष्ट (बुरी) देशका भंग—महारोग—क्लेश—कष्ट आदि अत्यंतदुःखोंको देतीहै ॥ ३०४ ॥

मेषसंक्रांतिवेलायांस्वरभेदंविचारयेत् ॥
संवत्सरफलंब्रूयाल्लोकानांतत्त्वचिंतकः ॥३०५॥

अर्थ—यदि मेषकी संक्रांतिके समय स्वरके भेदको विचारै तो तत्वका चिंतक मनुष्य लोकोंको संवत्सरका फल कहसकताहै ॥ ३०५ ॥

पृथिव्यादिकतत्त्वेनदिनमासाब्दजंफलम् ॥
शोभनंचयथादुष्टंव्योममारुतवह्निभिः ॥३०६॥

अर्थ—मेषसंक्रांतिके समय पृथ्वी आदितत्वोंसे दिन मास और वर्षका फल शोभन जाने—और आकाश पवन और अग्नितत्वसे दुष्टफल जाने ॥ ३०६ ॥

सुभिक्षंराष्ट्रवृद्धिःस्याद्बहुसस्यावसुंधरा ॥
बहुवृष्टिस्तथासौख्यंपृथ्वीतत्त्वंवहेद्यदि॥३०७॥

अर्थ—यदि मेषसंक्रांतिके दिन पृथ्वी तत्व चले तो सुभिक्ष देशकी वृद्धि पृथ्वीमें बहुत अन्न बहुत वृष्टि और बहुत सुख होताहै ॥ ३०७ ॥

अतिवृष्टिः सुभिक्षं स्यादारोग्यंसौख्यमेवच ॥
बहुसस्यातथापृथ्वीअप्तत्त्वंवैवहेद्यदि ॥ ३०८ ॥

अर्थ—यदि जलतत्व उस दिन बहता होय तो अति वृष्टि सुभिक्ष—आरोग्य और सुख और पृथिवीमें बहुत खेती होतीहै ॥ ३०८ ॥

दुर्भिक्षंराष्ट्रभंगःस्यादुत्पत्तिश्चविनश्यति ॥
अल्पादल्पतरावृष्टिरग्नितत्त्वंवहेद्यदि ॥ ३०९ ॥

अर्थ—यदि अग्नितत्व चलताहोय तो दुर्भिक्ष—देशका भंग—और उत्पत्तिका नाश—और बहुत स्वल्प वृष्टि होती है ॥ ३०९ ॥

उत्पातोपद्रवाभीतिरल्पावृष्टिःस्युरीतयः ॥
मेषसंक्रांतिवेलायांव्योमतत्त्वंवहेद्यदि ॥ ३१० ॥

अर्थ—यदि मेषसंक्रांतिके समय वायुतत्व चलता होयतो उत्पात—उपद्रव—भीति—अल्पवृष्टि—ईति[1] (मूसे लगना आदि छः) होतीहैं ॥ ३१० ॥

मेषसंक्रांतिवेलायांव्योमतत्त्वंवहेद्यदि ॥
तत्रापिशून्यताज्ञेयासस्यादीनांसुखस्यच ३११

अर्थ—यदि मेषसंक्रांतिके समय आकाश तत्व बहता होय तो सस्य आदि और सुखकी शून्यता जाननी ३११

पूर्णप्रवेशनेश्वासेसस्यंतत्त्वेनासिध्यति ॥
सूर्यचंद्रेऽन्यथाभूतेसंग्रहःसर्वसिद्धिदः ॥ ३१२ ॥

अर्थ—यदि श्वासका पूर्ण प्रवेश होजाय तो तत्त्वसे

१ अतिवृष्टिरनावृष्टिर्मूषिकाश्शलभाः शुकाः । अत्यासन्नाश्च राजानः षडेता ईतयः स्मृताः ।

धान्यकी सिद्धि होतीहै और यदि तत्वोंके उदयके समय सूर्य व चंद्रस्वर विपरीत होजाय तो और चंद्रके योगमें सूर्य और सूर्यके योगमें चंद्रहो—तो अन्तका संग्रह सिद्धि (लाभ) को देताहै ॥ ३१२ ॥

विषमेवाह्नितत्त्वंस्याज्ज्ञायते केवलंनभः ॥
तत्कुर्याद्वस्तुसंग्राहोद्विमासेचमहर्घता ॥३१३ ॥

अर्थ—यदि विषम (दक्षिण) स्वरमें अग्नितत्वहो अथवा केवल आकाशतत्व होय तो उससमय वस्तुओंका संग्रह करै तो दोमासमें महर्घता (महंगा पना) होगी ३१३

रवौसंक्रमतेनाडीचंद्रमंतेप्रसर्पिता ॥
खानिलेवाह्नियोगेनरौरवंजगतीतले ॥ ३१४ ॥

अर्थ—यदि रात्रिके समय सूर्यकी नाडी वहतीहो और प्रातःकालके समय चंद्रमाकी बहने लगै और उस समय आकाश पवन अग्नितत्व इनका योग होय तो पृथ्वीके तलपर रौरव (बडे २ अनर्थ) होतेहैं ३१४॥

इति संवत्सरप्रकरणम् ।

अथरोगप्रकरणम् ।

महीतत्त्वेस्वरोगश्चजलेचजलमातृतः ॥
तेजसिखेटवाटीस्थशाकिनीपितृदोषतः॥३१५॥

अर्थ—यदि प्रश्नके समय पृथ्वीतत्व वहताहोय तो स्व (प्रारब्ध) का रोग—जलतत्व चलताहोय तो जलोंकी

मातृकाओंका–तेजतत्व वहताहोय तो खेटवाटीमें रहने वाली शाकिनी वा पितृदोष (पीडा)से रोगका होना समझना ॥ ३१५ ॥

आदौशून्यगतोदूतःपश्चात्पूर्णोविशेद्यदि ॥
मूर्छितोऽपिध्रुवंजीवेद्यदर्थंप्रतिपृच्छति ॥३१६॥

अर्थ–यदि पूछने वाला दूत पहिले शून्य अंगकी तरफ आयाहो और पश्चात् (पीछे) पूर्ण अंगकी तरफ बैठ जाय तो मूर्छितभी वह रोगी निश्चयसेजीजायगा–जिसके लिये वह पूछताहै ॥ ३१६ ॥

यस्मिन्नंगेस्थितोजीवस्तत्रस्थःपरिपृच्छति ॥
तदाजीवतिजीवोसौयदिरोगैरुपद्रुतः ॥ ३१७ ॥

अर्थ–यदि जिस अंगमें जीव स्थितहो उसी अंगकी तरफ बैठाहुआ प्रश्नकरै तो रोगोंसे पीडितभी वह जीव अवश्य जीवेगा ॥ ३१७ ॥

दक्षिणेनयदावायुर्दूतोरौद्राक्षरोवदेत् ॥
तदाजीवतिजीवोसौचंद्रेसमफलंभवेत् ॥ ३१८॥

अर्थ–यदि वायु दक्षिणनाडीकी बहतीहो औरदूतके मुखसे भयानक वचन निकलैं तो वह जीव जीवेगा और चंद्रस्वर होयतो समान फल होताहै ॥ ३१८ ॥

जीवाकारंचवाधृत्वाजीवाकारंविलोक्यच ॥
जीवस्थोजीवितप्रश्नेतस्यस्याज्जीवितंफलम् ३१९

अर्थ–जीवाकारको धारकर और देखकर जीवमें

स्थित हुआ दूत जीनेका प्रश्न करै तो उसको जीवनका फल होताहै ॥ ३१९ ॥

वामचारेतथादक्षप्रवेशेयत्रवाहने ॥
तत्रस्थःपृच्छतेदूतस्तस्यसिद्धिर्नसंशयः ३२०॥

अर्थ—वामनाडी (इडा)अथवा दक्षिणनाडी(पिंगला) इन दोनोंके चलने वा प्रवेश करनेके समय जो दूत प्रश्न करै तो उसकी सिद्धि होतीहै इसमें संशय नहीं ३२०॥

प्रश्नेचाधःस्थितोजीवोनूनंजीवोहिजीवति ॥
ऊर्ध्वचारस्थितोजीवोजीवोयातियमालयम्३२१

अर्थ—यदि प्रश्नके समय दूत अधाभागमें स्थित होय तो वह रोगी जीव निश्चयसे जीवै यदि जीव ऊर्ध्व भागमें स्थित होय तो जीव यमालय में जायगा॥ ३२१

विपरीताक्षरप्रश्नेरिक्तायांपृच्छकोयदि ॥
विपर्ययंचविज्ञेयंविषमस्योदयेसति ॥ ३२२ ॥

अर्थ—यदि विषमनाडी (सुषुम्ना) का उदय हो और प्रश्नका कर्ता रिक्त नाडीमें ऐसा प्रश्न करै जिसके अक्षर विषम (१-३-५ आदि) हों तो विपरीत फल जानना॥

चंद्रस्थानेस्थितोजीवःसूर्यस्थानेतुपृच्छकः ॥
तदाप्राणवियुक्तोसौयादिवैद्यशतैर्वृतः ॥ ३२३ ॥

अर्थ—यदि अपनी जीव(श्वासवायु) चंद्रमाके चारमें स्थितहो और प्रश्नकर्ता सूर्यके चारमें स्थित होयतो यह रोगी चाहै सौ वैद्योंसे युक्तहो तो भी मर जायगा॥

पिंगलायांस्थितोजीवोवामेदूतस्तुपृच्छति ॥
तदाऽपिम्रियतेरोगीयदित्रातामहेश्वरः ॥ ३२४ ॥

अर्थ—यदि जीव पिंगलामें स्थितहो और दूत वामभागमें स्थित होकर पूछे तो उस समय भी रोगी मर जायगा चाहै महादेव भी रक्षा क्यों न करै ॥ ३२४ ॥

एकस्यभूतस्याविपर्ययेणरोगाभिभूतिर्भवतीह-
पुंसाम् ॥ तयोर्द्वयोर्बंधुसुहृद्विपत्तिःपक्षद्वयेव्य-
त्ययतोमृतिःस्यात् ॥ ३२५ ॥

अर्थ—एक भूत (तत्व) के विपरीत होनेसेभी पुरुषोंको रोग तिरस्कारका देते हैं और दो तत्वोंके विपरीत होनेसे बंधु और मित्रोंसे विपत्ति होतीहै यदि दो पक्ष(१ मास) तक व्यत्यय चला जाय तो मृत्यु होताहै॥ ३२५॥

इति रोगप्रकरणम् ।

अथ कालप्रकरणम् ।

मासादौचैवपक्षादौवत्सरादौयथाक्रमम् ॥
क्षयकालंपरीक्षेतवायुचारवशात्सुधीः ॥ ३२६ ॥

अर्थ—मास-पक्ष-और वर्ष इन तीनोंकी क्रमसे आदिमें विद्वान् मनुष्य वायुके प्रचार वशसे क्षय (मरण) के समयकी परीक्षा करै ॥ ३२६ ॥

पंचभूतात्मकंदीपंशिवस्नेहेनासिंचितम् ॥
रक्षयेत्सूर्यवातेनप्राणीजीवःस्थिरोभवेत्॥३२७॥

अर्थ–यह पंच भूतात्मक दीप (देह) को शिवरूप स्नेह (तेल) से सींच कर सूर्यरूप पवनसे जो प्राणी रक्षा करता है उसका जीव स्थिर होताहै ॥ ३२७॥

मारुतंबंधयित्वातुसूर्यंबंधयतेयदि ॥
अभ्यासाज्जीवतेजीवःसूर्यकालेऽपिवंचिते॥३२८॥

अर्थ–जो मनुष्य प्राणवायुको बांधकर दिनभर सूर्य स्वरका बंधन करताहै इस प्रकार अभ्यासके बलसे सूर्य कालका वंचन करके वह जीव जीसकता है ॥ ३२८॥

गगनात्स्रवतेचंद्रःकायपद्मानिसिंचयेत् ॥
कर्मयोगसदाभ्यासैरमरःशशिसंश्रयात् ॥३२९॥

अर्थ–आकाशमें गमन करनेसे चंद्रमाकी किरण नीचे गिरकर देहरूपी कमलोंको सींचतीहैं इस प्रकार कर्मके योगसे योगी चंद्रमाका आश्रय लेनेसे अभ्यासके द्वारा अमरहोजाताहै ॥ ३२९ ॥

शशांकंवारयेद्रात्रौदिवावार्योदिवाकरः ॥
इत्यभ्यासरतोनित्यंसयोगीनात्रसंशयः ॥३३०॥

अर्थ–जो रात्रिमें चंद्रस्वरका और दिनमें सूर्य-स्वरका निवारण करताहै इस प्रकार अभ्यासमें तत्पर वह योगी ही योगीहै इसमें संदेह नहीं है ३३० ॥

अहोरात्रेयदेकत्रवहतेयस्यमारुतः ॥
तदातस्यभवेन्मृत्युःसंपूर्णे वत्सरत्रये ॥ ३३१ ॥

अर्थ–जिस मनुष्यका प्राणवायु (श्वास) अहोरात्र

भर एक स्थानमें ही वहतारहै तब उस मनुष्यकी मृत्यु तीन वर्षमें हो जायगी ॥ ३३१ ॥

अहोरात्रद्वयंयस्यपिंगलायांसदागतिः ॥
तस्यवर्षद्वयंप्रोक्तंजीवितंतत्त्ववेदिभिः ॥ ३३२ ॥

अर्थ–जिस मनुष्यके श्वासकी दो गति अहोरात्र पिंगलामें रहै तत्वके ज्ञाताओंने उस मनुष्य का जीवन दो वर्षका कहाहै ॥ ३३२ ॥

त्रिरात्रेवहतेयस्यवायुरेकंपुटेस्थितः ॥
तदासंवत्सरायुस्तंप्रवदंतिमनीषिणः ॥ ३३३ ॥

अर्थ–जिस मनुष्यकी प्राणवायु तीनरात्र तक एकही नासिकाके पुटमें स्थित होकर चलै तो विद्वान् मनुष्य उसकी अवस्था एक वर्षकी कहतेहैं ॥ ३३३ ॥

रात्रौचंद्रोदिवासूर्योवहेद्यस्यनिरंतरम् ॥
जानीयात्तस्यवैमृत्युःषण्मासाभ्यंतरेभवेत् ३३४

अर्थ–जिस मनुष्यका रात्रिमें चंद्रस्वर और दिनमें सूर्यस्वर निरंतर वहै उस मनुष्यकी छः महीनेके भीतर मृत्यु होतीहै ॥ ३३४ ॥

लक्ष्यंलक्षितलक्षणेनसलिलेभानुर्यदादृश्य-
तेक्षीणोदक्षिणपश्चिमोत्तरपुरःषट्त्रिद्विमासै
कतः ॥ मध्यंछिद्रमिदंभवेद्दशदिनंधूमाकु-
लंतद्दिनेसर्वज्ञैरपिभाषितंमुनिवरैरायुःप्रमा-
णंस्फुटम् ॥ ३३५ ॥

अर्थ—जिस मनुष्यको जलके विषे सूर्यका प्रतिबिंब क्षीण (कटाहुआ) क्रमसे दक्षिण पश्चिम उत्तर और पूर्वमें दीखे वह छः ६ तीन ३ दो २ एक १ मास जीवेगा अर्थात् दक्षिणमें जिसको कटा दीखे उसकी छः ६ और पश्चिममें तीन ३ उत्तरमें २ पूर्वमें एक मासकी अवस्था समझनी—यदि प्रतिबिंबके मध्यमें छिद्र दीखे तो दश दिनकी अवस्था जाननी यदि संपूर्ण प्रतिबिंबमें धूमसा प्रतीत होय तो उसी दिन मृत्यु जाननी यह सर्वज्ञ मुनिवरोंने अवस्थाका प्रकट प्रमाण कहाहै ३३५

दूतःकृष्णकषायकृष्णवसनोदंतक्षतोमुंडि-
तस्तैलाभ्यक्तशरीररज्जुककरोदीनश्चपूर्णो
त्तरः ॥ भस्मांगारकपालपाशमुशलीसूर्या
स्तमायातियःकालीशून्यपदस्थितोगदयु-
तःकालानलस्याहृतः ॥ ३३६ ॥

अर्थ—यदि प्रश्न करनेवाला दूत काले भगवें वस्त्र धारकर अथवा दूतके दांतोंमें घाव होय मुंडित होय तैलाभ्यंग किये होय हाथमें रस्सी लिये होय दीन होय पूर्वोत्तर अर्थात् उत्तर देनेमें समर्थ और भस्म, अंगार, कपाल, मुसल, ये जिसके हाथमें होयँ जो सूर्यास्तके समय आवे—और जिसके पैर शून्य होयँ इतने प्रकारका दूत पूछनेको आवे तो रोगी कालको प्राप्त होगा ऐसा जाने ॥ ३३६ ॥

अकस्माच्चित्तविकृतिरकस्मात्पुरुषोत्तमः ॥
अकस्मादिंद्रियोत्पातःसन्निपाताग्रलक्षणम् ३३७

अर्थ–जिस रोगीके चित्तमें अकस्मात् विकार हो जाय और अकस्मात् उत्तम हो जाय और अकस्मात् इंद्रियोंमें उत्पात होजाय ये संनिपातके लक्षण जानने ॥

शरीरंशीतलंयस्यप्रकृतिर्विकृताभवेत् ॥
तदरिष्टंसमासेनव्यासतस्तुनिबोधमे ॥ ३३८ ॥

अर्थ–जिसका शरीर शीतलहो प्रकृतिमें विकार होय वह संक्षेपसे अरिष्ट जानना और मेरे सकाशसे विस्तारसे श्रवण कर ॥ ३३८ ॥

दुष्टशब्देषुरमतेशुद्धशब्देषुचाप्यति ॥
पश्चात्तापोभवेद्यस्यतस्यमृत्युर्नसंशयः ॥३३९॥

अर्थ–जो मनुष्य बुरे २ शब्दोंको कहै और जो शुद्ध शब्दोंको कहै और पीछेसे पश्चात्ताप करै उसकी मृत्यु होगी इसमें संशय नहीं ॥ ३३९ ॥

हुंकारःशीतलोयस्यफूत्कारोवह्निसन्निभः ॥
महावैद्योभवेत्तस्यतस्यमृत्युर्भवेद्ध्रुवम् ३४०॥

अर्थ–जिसका हुंकार शीतल होय और फूत्कार अग्निके समान होय उसकी चाहै महान् वैद्य रक्षा करै तोभी निश्चयसे मृत्यु होगी ॥ ३४० ॥

जिह्वांविष्णुपदंध्रुवंसुरपदंसन्मातृकामण्ड-
लमेतान्येवसरुंधतीममृतगुंशुक्रंध्रुवंवाक्षण-

म् ॥ एतेष्वेकमपिस्फुटंनपुरुषःपश्येत्पुरः-
प्रेषितःसोवश्यंविशतीहकालवदनंसंवत्सरा-
दूर्ध्वतः ॥ ३४१ ॥

अर्थ—जो मनुष्य जीभ (जिह्वा) आकाश ध्रुव-देवमार्गमातृकाओंका मंडल—अरुंधती—चंद्रमा—शुक्र—अगस्ति—इनमेंसे एककोभी कहनेसे न देखे वह रोगी अवश्य वर्ष दिनके अनंतर कालके मुखमें जायगा ३४१ ॥

अरश्मिबिंबंसूर्यस्यवन्हेःशीतांशुमालिनः ॥
दृष्ट्वैकादशमासायुर्नरश्चोर्ध्वंनजीवति ॥ ३४२ ॥

अर्थ—जिस मनुष्यको सूर्य चंद्रमाके प्रतिबिंब और अग्नि इनकी किरण प्रतीत न होय उस मनुष्यकी अवस्था ग्यारह मासकी जाननी ॥ ३४२ ॥

वाप्यांपुरीषमूत्राणिसुवर्णरजतंतथा ॥
प्रत्यक्षमथवास्वप्नेदशमासान्नजीवति ॥ ३४३ ॥

अर्थ—जिस मनुष्यको सुपनेमें अथवा जागृत अवस्थामें बावड़ीमें मल मूत्र सुवर्ण चांदी दीखे वह दश माससे परे नहीं जीवेगा ॥ ३४३ ॥

क्वचित्पश्यतियोदीपंसुवर्णंचकषान्वितम् ॥
विरूपाणिचभूतानिनवमासान्नजीवति ॥ ३४४ ॥

अर्थ—जो मनुष्य कभी २ दीपक को अथवा कसोटी लगाया हुआ सुवर्ण और संपूर्ण भूतोंको विपरीत देखे वह नौ महीनेसे परे नहीं जीवेगा ॥ ३४४ ॥

स्थूलांगोऽपिकृशः कृशोऽपिसहसास्थूल-
त्वमालभ्यतेप्राप्तोर्वाकनकप्रभांयदिभवेत्क्रू
रोऽपिकृष्णच्छविः ॥ शूरोभीरुसुधीरधर्म-
निपुणःशांतोविकारीपुमानित्येवंप्रकृतिः
प्रयातिचलनंमासाष्टकंजीवति ॥ ३४५ ॥

अर्थ—जिस मनुष्यकी प्रकृति (स्वभाव)इस प्रकार चलायमान हो जाय कि स्थूल होय तो एकदम कृश हो जाय और कृश होय तो एकदम स्थूल हो जाय और क्रूर वा कृष्ण वर्ण होकर सुवर्ण समान कांतिवाला हो जाय शूर वीर होकर भीरु होजाय—धार्मिक होकर अधर्मी हो जाय और शांत होकर चंचल हो जाय—तो वह मनुष्य आठ महीने जीवेगा ॥ ३४५ ॥

पीडाभवेत्पाणितलेचजिह्वामूलेतथास्याद्रु
धिरंचकृष्णम् ॥विद्धंनचग्लायतियत्रदृष्ट्या
जीवेन्मनुष्यःसहिसप्तमासम् ॥ ३४६ ॥

अर्थ—जिस मनुष्यके हाथके तलवे पर जिह्वाके मूलमें रुधिर काला हो जाय और जिसके गातमें नोचनेसे दुःख न होय वह मनुष्य सात मास जीवेगा ॥ ३४६ ॥

मध्यांगुलीनांत्रितयंनवक्रंरोगंविनाशुष्यति
यस्यकंठः ॥ मुहुर्मुहुःप्रश्नवशेनजाड्यात्ष-
ड्भिःसमासैःप्रलयंप्रयाति ॥ ३४७ ॥

अर्थ—जिस मनुष्यकी बीचकी तीन अंगुली नमुड़े और रोगके विनाही कंठ सूख जाय और जिसको वारंवार पूछनेसे जड़ता होजाय अर्थात् पूर्वापरका अनुसंधान न रहै वह मनुष्य छः महीनेमें मरणको प्राप्त होजायगा ॥ ३४७ ॥

नयस्यस्मरणंकिंचिद्विद्यतेस्तनचर्माणि ॥
सोवश्यंपंचमेमासिस्कंधारूढोभविष्यति ३४८॥

अर्थ—जिस मनुष्यके स्तनोंका चाम बधिर हो जाय वह मनुष्य पांचवें महीनेमें चार मनुष्योंके कांधेपर अवश्य चढेगा (मरैगा) ॥ ३४८ ॥

यस्यनस्फुरतिज्योतिःपीड्यतेनयनद्वयम् ॥
मरणंतस्यनिर्दिष्टंचतुर्थेमासिनिश्चितम् ॥३४९॥

अर्थ—जिस मनुष्यके नेत्रोंकी ज्योति प्रकाश न होय और दोनों नेत्रोंमें पीडा होय, उस मनुष्यका मरण चौथे मासमें अवश्य कहाहै ॥ ३४९ ॥

दंताश्ववृषणौयस्यनकिंचिदपिपीड्यते ॥
तृतीयेमासमावश्यंकालाज्ञायाभवेन्नरः ॥३५०॥

अर्थ—जिस मनुष्यके दांत और अंडकोशोंमें दबानेसे पीडा कुछभी न होय वह तीसरे महीनेमें कालकी आज्ञामें पहुंचेगा ॥ ३५० ॥

कालोदूरस्थितोवापियेनोपायेनलक्ष्यते ॥
तंवदामिसमासेनयथादिष्टंशिवागमे ॥ ३५१ ॥

अर्थ—दूर पर स्थितभी काल जिस उपायसे दीख जाय उस उपायको शिवशास्त्रके अनुसार संक्षेपसे कहताहूं ॥ ३५१ ॥

एकान्तंविजनंगत्वाकृत्वाऽऽदित्यंचपृष्ठतः ॥
निरीक्षयेन्निजच्छायांकंठदेशेसमाहितः॥ ३८२॥

अर्थ—कि एकांत विजन वनमें जा कर और सूर्यको पीठपर करके अपनी छाया को सावधानीसे कंठ देशमें देखे ॥ ३५२ ॥

ततश्चाकाशमीक्षेतह्रींपरब्रह्मणेनमः ॥
अष्टोत्तरशतंजप्त्वाततः पश्यतिशंकरम् ॥३८३॥

अर्थ—फिर आकाश देखे और 'ह्रींपरब्रह्मणेनमः' इस मंत्रका १०८ वार जप करे तो वह मनुष्य शिवजीकोदेखेगा ॥ ३५३ ॥

शुद्धस्फटिकसंकाशंनानारूपधरंहरम् ॥
षण्मासाभ्यासयोगेनभूचराणांपतिर्भवेत् ॥
वर्षद्वयेनतेनाथकर्त्ताहर्त्तास्वयंप्रभुः ॥ ३८४ ॥

अर्थ—जिन शिवजीका रूप शुद्धस्फटिकके तुल्यहै और जो नानारूपको धारतेहैं इस प्रकार छः महीने अभ्यास करनेसे भूचरों (प्राणी) का राजा होताहै और दो वर्ष अभ्यास करनेसे कर्त्ता हर्त्ता, स्वयंप्रभु होजाताहै ॥ ३५४ ॥

त्रिकालज्ञत्वमाप्नोतिपरमानंदमेवच ॥
सततभ्यासयोगेननास्तिकिंचित्सुदुर्लभम् ३५५

अर्थ—और निरंतर अभ्यास करनेसे भूत भविष्यत् वर्तमान तीनों कालोंका ज्ञान और परम आनंदको प्राप्त होताहै और उसको कोई वस्तु दुर्लभ नहीं होती ३५५

तद्रूपंकृष्णवर्णयःपश्यतिव्योम्निनिर्मले ॥
षण्मासान्मृत्युमाप्नोतिसयोगीनात्रसंशयः॥३५६

अर्थ—जिस योगीको निर्मल आकाशमें वह शिवजीका रूप कृष्णवर्ण दीखे वह योगी छः महीनेसे मृत्युको प्राप्तहोगा इसमें संशय नहीं ॥ ३५६ ॥

पीतेव्याधिर्भयंरक्तेनीलेहानिंविनिर्दिशेत् ॥
नानावर्णेथचेत्तास्मिन्सिद्धश्चगीयतेमहान् ३५७

अर्थ—पीला दीखे तो व्याधि लाल दीखे तो भय नीला दीखे तो हानि होतीहै यदि उसमें नाना वर्ण दीखें तो योगी सिद्धियोंको प्राप्त होताहै ॥ ३५७ ॥

पदेगुल्फेचजठरेविनाशःक्रमशोभवेत् ॥
विनश्यतोयदाबाहूस्वयंतुम्रियतेध्रुवम् ॥३५८॥

अर्थ—यदि छायामें पैर गुल्फ (टकने) पेट—ये न दीखें अथवा भुजा नदीखें तो निश्चयसे योगी मृत्युको प्राप्त होगा ॥ ३५८ ॥

वामबाहुस्तथाभार्यानश्यतेतिनसंशयः ॥
दक्षिणेबंधुनाशोहिमृत्युमात्मंविनिर्दिशेत् ३५९॥

अर्थ—यदि वामभुजा न दीखै तो भार्या नष्ट होगी इसमें संशय नहीं दक्षिण भुजा नदीखै तो बंधुओंका नाश होगा और एक मासमें अपनी मृत्यु होगी ॥ ३५९ ॥

अशिरोमासमरणंविनाजंघेदिनाष्टकम् ॥
अष्टाभिःस्कंधनाशेनछायालोपनतत्क्षणात् ३६०

अर्थ—शिर न दीखै तो मासभर—जंघा नदीखै तो आठ दिनमें-कंधे नदीखें तो आठ दिनमें-सर्वथा छाया न दीखे तो उसी क्षणमें मृत्यु जाननी ॥ ३६० ॥

प्रातःपृष्ठगतेरवौचनिमिषाच्छायांगुलीश्चा-
धरंदृष्ट्वार्द्धेनमृतिस्त्वनंतरमहोच्छायांनरःप-
श्यति ॥ तत्कर्णांसकरास्यपार्श्वहृदयाभा
वेक्षणार्धात्स्वयंदिङ्मूढोहिनरश्शिरोविगम
तोमासांस्तुषड्जीवति ॥ ३६१ ॥

अर्थ—जो प्रातःकालके समय सूर्यको पीठ की तरफ करके छाया पुरुषके अंगुली और होठ नदीखें तो निमिष मात्रमें—और फिर छायाको और अपनेको न देखे तो आधे निमिषमें मृत्यु होगी और छायाके कान, कंधे, हाथ, मुख, पार्श्व, हृदय, नदीखें तो आधे क्षणमें मृत्युं होगी और छाया पुरुषका शिर नदीखे और स्वतं दिशाओंका ज्ञान न रहे तो मनुष्य छः महीने जीवैगा।

एकादिषोडशाहानियदिभानुर्निरंतरम् ॥
वहेद्यस्यन्चवैमृत्युःशेषाहेनचमासिके ॥ ३६२ ॥

अर्थ—जिस मनुष्यका एक एक दिनसे सोलह दिन पर्यंत नियमसे सूर्य स्वरही चलता रहै उस मनुष्यकी मृत्यु पंद्रह दिनके भीतर हो जायगी ॥ ३६२ ॥

संपूर्णवहतेसूर्यश्चंद्रमानैवदृश्यते ॥
पक्षेणजायतेमृत्युःकालज्ञानेनभाषितम्॥३६३॥

अर्थ—जिस मनुष्यका निरंतर सूर्य स्वरही बहता रहै और चंद्र स्वर कभी भी नदीखै तो उस मनुष्यकी मृत्यु पंद्रह दिनके भीतर हो जायगी ॥ ३६३ ॥

मूत्रंपुरीषंवायुश्चसमकालंप्रवर्त्तते ॥
तदाऽसौचलितोज्ञेयोदशाहेम्रियतेध्रुवम्॥३६४॥

अर्थ—जिस मनुष्यके मूत्र—मल—वायु एक वार निकसे उसको चला चली पर जाने वह दस दिनमें अवश्य मर जावेगा ॥ ३६४ ॥

संपूर्णवहतेचंद्रःसूर्योनैवचदृश्यते ॥
मासेनजायतेमृत्युःकालज्ञेनानुभाषितम्॥३६५॥

अर्थ—जिस मनुष्यका बराबर चंद्रस्वर बहताहै और सूर्य स्वर एक वारभी न दीखै वह मनुष्य एक मासमें मर जायगा वह कालके ज्ञानियोंने कहाहै ॥ ३६५ ॥

अरुंधतींध्रुवंचैवविष्णोस्त्रीणिपदानिच ॥
आयुर्हीनानपश्यंतिचतुर्थंमातृमंडलम् ॥३६६॥

अर्थ—अरुंधती—ध्रुव—विष्णुके तीन पद—चौथा मातृ मंडल—इनको जो न देखे वह आयुसे हीन समझने ॥ ३६६ ॥

अरुंधतीभवेज्जिह्वाध्रुवोनासाग्रमेवच ॥
भ्रुवौविष्णुपदंज्ञेयंतारकंमातृमंडलम् ॥ ३६७॥

अर्थ—जिह्वाको अरुंधती नासिकाके अग्रभागको ध्रुव भ्रुकुटियोंको विष्णुपद और तारकाओंको मातृमंडल कहतेहैं ॥ ३६७ ॥

नवभ्रुवंसप्तघोषंपंचतारांत्रिनासिकाम् ॥
जिह्वामेकादिनंप्रोक्तंम्रियतेमानवोध्रुवम् ॥३६८॥

अर्थ—जो भ्रुकुटी नदीखै तो ९ दिनमें कानोंका शब्द न सुने तो सात दिनमें तारा न दीखै तो पांच दिनमें नासिका न दीखै तो तीन दिनमें जिह्वा न दीखै तो मनुष्यका निश्चयसे मरण कहाहै ॥ ३६८ ॥

कोणावक्ष्णोरंगुलिभ्यांकिंचित्पीड्यनिरीक्षयेत् ॥
यदानदृश्यतेबिंदुर्दशाहेनभवेन्मृतः ॥ ३६९ ॥

अर्थ—नेत्रोंके कोनोंको अंगुलियोंसे कुछ दबा कर देखे यदि दबानेसे जलकी बिंदु न निकले तो जानलो कि दस दिनमें मरजायगा ॥ ३६९ ॥

तीर्थस्नानेनदानेनतपसासुकृतेनच ॥
जपैर्ध्यानेनयोगेनजायतेकालवंचना ॥ ३७० ॥

अर्थ—जो तीर्थोंके स्नान—दान—तप—सुकृत—जप-ध्यान योग इनसे कालकी वंचना हो जातीहै अर्थात् आयाहुआभी काल टल जाताहै ॥ ३७० ॥

शरीरंनाशयंत्येतेदोषाधातुमलास्तथा ॥

समस्तुवायुर्विज्ञेयोबलतेजोविवर्द्धनः ॥ ३७१ ॥

अर्थ—धातु—और मल आदि ये दोष शरीरको नष्ट कर देतेहैं और वायुकी समानता बल और तेज बढानेवाली होतीहै ॥ ३७१ ॥

रक्षणीयस्ततोदेहोयतोधर्मादिसाधनम् ॥
योगाभ्यासत्वमायांतिसाधिजप्यास्तुसाध्यताम्॥
असाध्याजीवितंघ्नंतिनतत्रास्तिप्रतिक्रिया ३७२॥

अर्थ—इससे उस देहकी रक्षा करनी जो धर्म आदिका साधनहै—योगाभ्यास ही जपरूप हो जाताहै और योगसे असाध्य साध्य हो जाताहै—जो योगाभ्यास न होय तो असाध्य मरजातेहैं उनका कोई प्रतीकार (इलाज) अन्य नहीं ॥ ३७२ ॥

येषांहृदिस्फुरतिशाश्वतमद्वितीयं
तेजस्तमोनिवहनाशकरंरहस्यम् ॥
तेषामखंडशशिरम्यसुकांतिभाजां
स्वप्नेऽपिनोभवतिकालभयंनराणाम् ॥ ३७३ ॥

अर्थ—जिन मनुष्योंके हृदयमें अनादि, अद्वितीय, अंधकारके समूहका नाश करनेवाला और गोपनीय तेज (शिवस्वरोदयका ज्ञान) फुरताहै अखंड चंद्रमाके समान रमणीयहै कांति जिनकी ऐसे उन मनुष्योंको स्वप्नमें भी कालका भय नहीं होता ॥ ३७३ ॥

इडागंगेतिविज्ञेयापिंगलायमुनानदी ॥
मध्येसरस्वतींविद्यात्प्रयागादिसमस्तथा ॥३७४

अर्थ—इडा नाडी गंगा और पिंगला नाडी यमुना नदी जाननी और मध्यकी सुषुम्ना (सरस्वती)—इन तीन नाडीके संगमको प्रयागके समान समझना ३७४

आदौसाधनमाख्यातंसद्यःप्रत्ययकारकम् ॥
बद्धपद्मासनोयोगीबंधयेदुड्डियानकम् ॥ ३७५ ॥

अर्थ—प्रथम साधनकोही शीघ्र प्रतीति का कारण कहाहै—इससे योगी पद्मासनको बांध कर उड्डियानक नाम आसनको बांधै अर्थात् अपानकी गतिको ऊपर करके नाभिरंध्रके समीप लावे ॥ ३७५ ॥

पूरकःकुंभकश्चैवरेचकश्चतृतीयकः ॥
ज्ञातव्योयोगिभिर्नित्यंदेहसंशुद्धिहेतवे ॥ ३७६ ॥

अर्थ—योगी जन अपने देह की भली प्रकार शुद्धिके लिये पूरक—कुंभक-रेचक-इनतीनों प्राणायामोंको जाने

पूरकःकुरुतेवृष्टिंधातुसाम्यंतथैवच ॥
कुंभकेस्तंभनंकुर्याज्जीवरक्षाविवर्द्धनम् ॥३७७॥

अर्थ—उनतीनोंमें पूरक प्राणायाम (बाहरकी वायुको भीतर खींचना) वृष्टिसे देहको सींचता है और संपूर्ण धातुओंको समान करताहै-और कुंभक प्राणायाम (बाहरभीतरकी वायुको स्थिर रखना) देहकी धातुओंका स्तंभन (जहांकी तहां रखना) करताहै और जीव की रक्षा को बढताहै ॥ ३७७ ॥

रेचकोहरतेपापंकुर्याद्योगपदंव्रजेत् ॥
पश्चात्संग्रामवत्तिष्ठेल्लयबंधंचकारयेत् ॥ ३७८ ॥

अर्थ—रेचक प्राणायाम (भीतरकी वायु बाहर निकालना) पापको हरताहै इस प्रकार जो प्राणायाम करताहै वह योग पदको प्राप्त होताहै—फिर जो योगी समान रूपसे टिकताहै वह लय बंधको करा सकताहै अर्थात् मृत्यु को रोक सकताहै ॥ ३७८ ॥

कुंभयेत्सहजंवायुंयथाशक्तिप्रकल्पयेत् ॥
रेचयेच्चंद्रमार्गेणसूर्येणापूरयेत्सुधीः ॥ ३७९ ॥

अर्थ—स्वाभाविक वायुको अपनी शक्तिके अनुसार कुंभक प्राणायामसे रोके चंद्रस्वरसे रेचक करै और सूर्य स्वरसे पूरक प्राणायामको बुद्धिमान् मनुष्य करै॥

चंद्रंपिबतिसूर्यश्चसूर्यंपिबतिचंद्रमाः ॥
अन्योन्यकालभावेनजीवेदाचंद्रतारकम्॥३८०॥

अर्थ—जिसके चंद्र स्वरको सूर्य स्वर और सूर्य स्वरको चंद्र स्वर परस्पर समय २ पर पीवें वह चंद्रमा और तारों की स्थिति पर्यंत जीवेगा ॥ ३८० ॥

स्वीयांगेवहतेनाडीतन्नाडीरोधनंकुरु ॥
मुखबंधममुंचन्वैपवनंजायतेयुवा ॥ ३८१ ॥

अर्थ—जो योगी अपने अंगमें जो नाडी वहती होय उसको रोक कर और अपने मुखको बांध कर मुखसे

पवनको न निकसने दे वह योगी वृद्ध अवस्थासे युवा अवस्थाको प्राप्त होताहै॥ ३८१ ॥

मुखनासाक्षिकर्णांतानंगुलीभिर्निरोधयेत् ॥
तत्त्वोदयमितिज्ञेयंषण्मुखीकरणंप्रियम् ॥३८२॥

अर्थ—मुख—नासिका—नेत्र—कान—इनको अपनी अंगुलियोंसे रोके इसी को तत्वोदय षणमुखीकरण और प्रिय जानना ॥ ३८२ ॥

तस्यरूपंगतिःस्वादोमंडलंलक्षणंत्विदम् ॥
सवेत्तिमानवोलोकेसंसर्गादपिमार्गवित् ॥३८३॥

अर्थ—उसका रूप यह है कि वह योगी तत्वोंका रूप गति स्वाद मंडल लक्षण—इन सबको जगत्में जानताहै और तत्वोंके हेलमेलमेंभी पृथक् २ मार्गको जान सकताहै ॥ ३८३ ॥

निराशोनिष्कलोयोगीनकिंचिदपिचिंतयेत् ॥
वासनामुन्मनांकृत्वाकालंजयतिलीलया॥३८४॥

अर्थ—आशा रहित और शुद्ध रूप योगी किसी वस्तुकी चिंता न करै और वासनाओंके त्यागसे लीला (अनायास) से कालको जीतताहै ॥ ३८४ ॥

विश्वस्यवेदिकाशक्तिर्नेत्राभ्यांपरिदृश्यते ॥
तत्रस्थंतुमनोयस्ययाममात्रंभवेदिह ॥ ३८५ ॥

अर्थ—सब विश्वके जाननेकी शक्ति नेत्रोंसे दीखते हैं उस शक्तिके विषय जिस योगीका मन एक प्रहै मात्र टिके ॥ ३८५ ॥

तस्मात्सुप्तेनित्यंघटिकात्रयमानतः ॥
शिवेनोक्तं पुरातंत्रेसिद्धस्यगुणगह्वरे॥ ३८६ ॥

अर्थ—उस योगीकी अवस्था प्रति दिन तीन२ घटिकाके प्रमाणसे बढतीहै—यह बात यमगुणवान् सिद्धोंके समूहमें शिवजीने तंत्र शास्त्रमें कहीहै ॥ ३८६ ॥

बद्धंपद्मासनस्थागुदगतपवनंसन्निरुद्धयामु
सुच्चैस्तंतस्यापानरंध्रक्रमजितमनिलंप्राण-
शक्त्यानिरुद्धय ॥ एकीभूतंसुषुम्नाविवर-
मुपगतंब्रह्मरंध्रेचनीत्वानिक्षिप्याकाशमार्गे-
शिवचरणरतायांतितेकेऽपिधन्याः ॥ ३८७ ॥

अर्थ—योगी पद्मासनको बांधकर गुदामें स्थित पवन (अपान) को रोक कर उसको ऊंचेको लेजाय और अपान रंध्रमें जीते (स्थिर) हुये उसको प्राण शक्तिके संग रोक कर दोनों की एकता करे जब वे दोनों एक हो जांय और सुषुम्ना नाडीके रंध्रमें पहुंचावे फिर ब्रह्म रंध्रमें लेजाकर आकाश मार्गमें छोडदे-इस प्रकार शिवजीके चरणोंमें रत जो कोई योगी जातेहैं (मरतेहैं) वे धन्यहैं ॥ ३८७ ॥

एतज्जानातियोयोगीएतत्पठतिनित्यशः ॥
सर्वदुःखविनिर्मुक्तोलभतेवांछितंफलम् ॥३८८॥

अर्थ—जो योगी इसको जानताहै और नित्य पढताहै संपूर्ण दुःखोंसे रहित वह योगी वांछित फलको प्राप्त होताहै ॥ ३८८ ॥

स्वरज्ञानंनरेयत्रलक्ष्मीःपदतलेभवेत् ॥
सर्वत्रचशरीरेऽपिसुखंतस्यसदाभवेत् ॥ ३८९ ॥

अर्थ—जिस मनुष्यको स्वरका ज्ञानहै उसके चरणोंकेनीचे लक्ष्मीहै और उसके शरीरमें और जहां वह जाय वहां सुख उसको होताहै ॥ ३८९ ॥

प्रणवःसर्ववेदानांब्राह्मणोभास्करोयथा ॥
मृत्युलोकेतथापूज्यःस्वरज्ञानीपुमानपि॥३९०॥

अर्थ—संपूर्ण वेदोंमें जैसे ओंकार और ब्राह्मणों को जैसा सूर्य पूज्यहैं इस प्रकार इस मृत्यु लोकमें स्वरज्ञानी पुरुषभी पूज्यहै ॥ ३९० ॥

नाडीत्रयंविजानातितत्त्वज्ञानंतथैवच ॥
नैवतेनभवेत्तुल्यंलक्षकोटिरसायनम् ॥ ३९१ ॥

अर्थ—जो मनुष्य पूर्वोक्त तीनों नाडियोंको जानताहै और जिसको तत्वका ज्ञान है उसकी तुल्य लक्ष्य कोटि रसायन नहीं हैं ॥ ३९१ ॥

एकाक्षरप्रदातारंनाडीभेदविवेचकम् ॥
पृथिव्यांनास्तितद्द्रव्यंयद्दत्त्वाचानृणोभवेत् ३९२

अर्थ—नाडी भेदका विवेचन करने वाला जो एक अक्षरभी देदे —पृथिवीमें वह द्रव्य नहीं है जिसको देकर अनृणी हो जाय अर्थात् उसका बदला देसके ॥

स्वरस्तत्त्वंतथायुद्धंदेविवश्यंस्त्रियस्तथा ॥
गर्भाधानंचरोगश्चकलार्द्धेनैवमुच्यते ॥ ३९३ ॥